इस्मत चुग़ताई
ख़्वाजा अहमद अब्बास

समझौता

चित्रकूट
दिल्ली : कलकत्ता

आज़ाद क़लम के नाम

क्रम :

समझौता

एक

जी हां, यह चर्च गेट है। यहां चर्च तो आस-पास कोई नहीं, हां गेट बहुत से है। अगर आप लोकल ट्रेन से उतरकर नाक की सीध मे चलते चले जायें तो वजन करने की मशीन के पास से गुजर कर बर्फ के प्याऊ को पार करेंगे। दायें हाथ को बाहर निकलने की चक्रियां नजर आयेंगी। ये फन्दे उन बेटिकट सफ़र करने वालो के लिए हैं, जो एकदम बच्चों और औरतो के रेले के साथ सटक लेते है। इन चक्रियो मे से जरा कायदे से निकलियेगा, नही तो घुटने की चपनी पर वह मजेदार चोट लगेगी कि कई दिन तक लंगड़ाना पड़ेगा। यहां आपको दोनों कोनों पर दो उकताये हुए टिकट-चेकर खडे बातें करते नजर आयेंगे। आप चाहें तो कोई पुराना टिकट थमा दें या वजन का टिकट ही पकडाकर झप से निकल आयें, ये बिल्कुल बेपरवाह आपके आर-पार एक-दूसरे से बातें करते रहेंगे। जरा देख के भाई! सीढियों के ठीक नीचे पान की पीक घुली हुई कीचड़ बह रही है। आप चाहे कितनी खोज लगायें, यह पता नही चला सकते कि यह कीचड़ कहा से इकट्ठा होती है, आसमान से टपकती है या जमीन से सोता फूटता है। कोई ओर-छोर नही दीखता। दायें हाथ पर दीवार की ओर मुह किये, आपको एक पर-नोची हुई मुर्गी की शक्ल की श्रीमती जी नजर आयेंगी। जब तक सूरज या सड़क के खंभे की रोशनी रहती है, ये बड़ी सावधानी से टटोलकर अपने छिदरे खिचड़ी

बालो मे से जू और लीखें पकडकर पहले तो बड़े ध्यान मे उन्हे परखती हैं, उस समय उनके झुर्रियोंदार चेहरे पर विजयोल्लास के भाव छा जाते है, जैसे गोताखोर अपनी जान की बाज़ी लगाकर, पानी की तह से मोती निकाल कर लाया हो, फिर वे उस कमबख्त जू को बायें हाथ के अ गूठे के नाखून पर लिटाकर, दायें हाथ के नाखून से क़त्ल कर देती है। अगर आप उन्हें जूं मारते देखें तो यही समझेंगे कि वे बड़ी कारीगरी से किसी नाज़ुक-सी अ गूठी में कोई अनमोल नगीना जड़ रही है। जू को ठिकाने लगाकर उनकी आखो में भडकती हुई इन्तकाम की आग दम भर को ठडी पड जाती है, जैसे उन्होने एक मोटी-सी जू नही, किसी सूदखोर तोद वाले का सफाया कर दिया हो। नाखून पर बहुत-सी लाशें चिपक जाती हैं तो वे सामने दीवार पर नाखून रगडकर मलबा छुडा देती हैं और फिर नये सिरे से नये शिकार के पीछे उंगलियो के घोड़े छोड देती हैं।

ज़रा इन देवी जी के चीथडों और सामान से बचकर निकलियेगा, वरना आपको ऐसे घूरेंगी, जैसे किसी पर्दानशीन कुंआरी के सोने के कमरे में आप बेधड़क घुस पड़े हों!

जरा दोनों तरफ से आती-जाती गाडियों से बचकर, फुटपाथ पर आ जाइये न! नाई की कोहनी में घुटना न लगे भाई जान, वरना सर मुडाने वाले के सर पर सचमुच ओले बरस जायेंगे। ये सड़े हुए केले जो बेच रही है न, उसके पास ही पान का खोमचा है, ज़रा सावधानी से फलांगिये—शाबाश!

सरकार होटल से निकलते हुए बासी इडली डोसे के भभके से नाक सिकोड़ते, कीचड लाघते, भेलपूरी वाले की बाल्टी को फलांगिये—बिल्कुल ठीक! यह ए० रोड है। यहां दो-चार गुमड़े तो आये दिन पड़ते ही रहते हैं। बस जी कड़ा करके चले आइये। केले के छिलको पर रपटते, कुत्तों की डोरियों में उलझते—बास!

यह जयहिन्द कालेज के बिल्कुल सामने जिरा बिल्डिंग के अहाते पर सबसे अधिक बच्चे लदे नजर आयें, वही 'इंडस कोर्ट' है। बीच के फाटक के एक तरफ दीवार पर आपको अधकचरी लड़कियां बैठी नजर आयेंगी और दूसरी तरफ़ धींगे-धींगे बढ़ते हुए लड़के। इन लड़कियों में आपको मलिन मुनरो,

बर्मी यादों और मेन्डूडी की झलकियां नजर आयेंगी और लड़के एलुस इसलिए, जिमी डीन और रिकी नेल्सन की परछाइयां मालूम होंगे। यह दीवार इन्डस कोर्ट में रहने वालों के लिए बड़ा महत्व रखती है। यहीं बैठकर इश्क किये जाते हैं—मंगनियां तय होती है, शादियां होती हैं और इसी दीवार पर जड़ने के लिए नगीने भी है। इस आवागमन के सिलसिले से बेपरवाह यह दीवार पान की पीकों और वोट मांगने वालों के प्रोपेगंडे का बेजबान शिकार बनी रहती है।

इन्डस कोर्ट के ग्राउंड फ्लोर पर गुरु ग्रन्थ साहब का स्थान है। भोली-सी शक्ल का गुदगुदा-सा पुजारी मैली-सी बनियान और तहमद पहने सीढ़ियों पर खड़ा जम्हाइयां लिया करता है। उसकी गुद्दी पर नींबू के बराबर लटका हुआ बालों का जूड़ा हमेशा तेल में भीगा रहता है। वैसे दिनभर नीचे रॉक ऐंड रोल के फिल्मी रिकार्ड बजा करते हैं, लेकिन शाम को खूब लोबान जलाकर भजन गाये जाते है, इन भजनों में दिल नहीं लगता इसलिए वह प्रायः फ़िल्मी धुनों पर भजन की ट्यून बना लेता है और रात गये तक ढोल पीटा करता है।

और जब गुरु ग्रन्थ जी के स्थान से "लाल लाल गाल" और रेशमी शलवार..." सुनायी देता है तो आदमी अनायास ही भगवान की लीला का क़ायल हो जाता है। उसकी शान निराली है; वह चाहे तो पत्थर पर फूल खिला दे और मंदिरों-मस्जिदों में रॉक ऐंड रोल बजवा दे!

यहां पहले माले पर मेरा घर है।

अगर बालकनी में पश्चिम की ओर मुंह करके खड़े हो और नेक-नियत बांधकर चालीस डिग्री का कोण बनाकर देखें तो आपको नीलोफ़र का फ्लैट साफ नजर आयेगा। जी, वही—जो सबसे ज्यादा भड़कीला फ्लैट है, जिसके कमरे गहरे फ़िरोज़ी और गुलाबी रंगे हुए हैं, जहां न्योन लाइट की रोशनी में पर्दे झिलमिला रहे हैं। जी, वही बिल्डिंग, जिसके सामने सबसे तगड़ी-तगड़ी मोटरें खड़ी रहती हैं, ये गाड़ियां शाम होते ही आ जाती हैं और रतजगा मनाकर चली जाती हैं। इनके ड्राइवर पास की इमारतों की 'आया लोग' के साथ और मालिक सामने के जगमगाते हुए फ्लैट में ऐश किया करते हैं। पास ही नेवी मेस से स्मगल की हुई विलायती शराब भी आसानी से मिल जाती है। वह, जो

भरे-भरे रसगुल्ले जैसे शरीर वाली लचकदार सुन्दरी है, वही इस फ्लैट की अन्नदाता है। इस फ्लैट तक लाने के लिए ही मैंने आपको इतने कष्ट दिये और बेकार की तफसीलें बताई हैं कि कहीं भूल से आप रॉक एँड रोल की धुनें सुनकर ठीक उधर ही न पधार जायें!

नीलोफर जब पैदा हुई थी तो उसका नाम कुरान शरीफ में से निकाल कर मासूम बानो रखा गया था। तीन बेटों पर बेटी पैदा हुई थी, जी भरकर लाड़ प्यार हुए! खाला जानी और छोटे मामू में झगडा हो गया था, दोनों अपने बेटो के लिए उसे मागने पर तुले हुए थे। नीलोफर की पीठ पर जुबैदा और हलीमा पैदा हुई और जब सबसे छोटा, पेट की खुरचन, साल भर का था तो देश का बंटवारा हो गया। लेकिन हैदराबाद—ममलकते-ख़ुदादाद में क़ासिम रिज़वी की फमान में दिल्ली के लालकिले पर झंडे गाड़ने के मसूबे बनाये जा रहे थे। मामूमा उर्फ नीलोफर मुकीम हाल चर्च गेट के वालिद, माजिद उस बेलगाम फौज के ख़ास सिपाही थे।

पुलिस ऐक्शन के बाद वे बड़े बेटो और रुपया-पैसा, कीमती जवाहरात और मकानो के कागजात लेकर निकल भागे। सिर्फ गोद का बच्चा और लड़कियां बेगम के साथ रह गये। इरादा था कि पाकिस्तान में पैर जम जायेंगे तो सब को बुला लेंगे।

पर न जाने क्या हो गया उन्हे वहा जाकर, कि लौटकर ख़बर ही न ली। बड़े लड़को ने शादियां कर ली, बड़े-बडे ओहदों पर जम गये। मकान और जमीनें भी एलाट करा ली तब कही जाकर मा बहनें याद आयी।

और तो और, बड़े मियां ने भी उन्नीस बरस की एक लौंडिया से ब्याह रचा लिया। बेगम साहब न बेटो की शादियों की ख़बर पर हंसी न सौत आने पर रोयी। जो कुछ मिया छोड गये थे, वह कुछ दिन काम आया। फिर बचे-खुचे जेवर से काम चलाया। कुछ दिन हाथों की चूड़िया चबायीं, फिर जुगनू, चम्पाकली और नौगरियां निगलीं, फिर बाज़ूबन्द और बिछुओ जैसे गहने भी पेट की खत्ती में उतर गये। कौन तफसील मे जाये, कुछ हुआ ही होगा कि वे बोरिया-बिस्तर समेट कर बम्बई आ गयी।

लोगों का ख़याल है कि बम्बई इसलिए आयीं कि यहा हर माल की अच्छी क़ीमत मिलती है। बम्बई नगर दिल वालो की बस्ती है, यहां हर चीज

के क़दरदान जी खोलकर दाम देते हैं, चाहे वे पुरानी मोटरें हों या निज़ाम की रखैलों के जेवर, कमाऊ बेटे हों या लचकदार बेटियां, दूसरे नगरों के मुक़ाबले में बम्बई में मंहगे बिकते हैं।

पहले तो आकर वे एक जान-पहचान वाले के यहां रहीं। उनकी पत्नी ने जब दांत निकोसे तो उनके पति ने तरस खाकर दादर में एक कमरा दिलवा दिया। बेचारे आप ही किराया भी दे दिया करते और कुछ उधार भी। काम चलता रहा, इन मेहरबानियों के बदले में कभी कुछ न मांगा। एहसान मियां बस शाम होते ही आकर बैठ जाते, बच्चों के साथ हंस-बोलकर बारह एक बजे चले जाते। बेगम के बालों में कुछ थोड़ी-सी चांदी झलकने लगी थी, असली घी खाया था। पहले तो उन्होंने निकाह करने की ज़िद की, पर जब आठ दिन के लिए मेहरबान दोस्त किसी जरूरी काम से न आ सके तो नवें दिन उनकी सूरत देखकर बेगम की नरगिसी आंखों में मोती झलकने लगे।

दो साल इसी तरह बीत गये। सलीम मियां के स्कूल का खर्च, लड़कियों की ज़रूरतें तंगी-तुर्शी से पूरी होती रहीं। बेगम को हैदराबाद जाना था, कुछ तांबे के बर्तन पड़े थे, उन्हें जाकर बेचना था। गयीं तो हफ्ता भर लग गया।

वापस लौटीं तो बच्चे जुहू गये हुए थे। लौटकर आये तो न जाने क्यों बेगम को ऐसा लगा कि मासूमा बहुत जवान हो गयी है, उसकी शादी की फ़िक्र बर्छी बनकर कलेजे में उतर गयी। नहाकर मासूमा एक फूलदार हाउस कोट पहने, तौलिया से बाल पोंछती निकली तो उन्हें बड़ा ताज्जुब हुआ। यह नया क़ीमती तौलिया,'''फूलदार हाउस कोट'''यह तो शायद पहले नहीं था।

और फिर तूफ़ान फट पड़ा। उनका बस चलता तो मासूमा का क़ीमा बना के कुत्तों को खिला देतीं। मगर उसने क़समें खाकर यक़ीन दिलाना चाहा कि एहसान साहब ने सैरें कराईं, पाउडर, लिपस्टिक दिलवायीं, ड्रेसिंग गाउन उसे बहुत पसन्द था, इसके अतिरिक्त कुछ बात नहीं थी।

बेगम के आंसू तो शायद कभी के सूख चुके थे। वे रातभर करवटें बदलती रहीं, आहें भरती रहीं। और क्या करतीं?

दूसरे दिन जब एहसान साहब आये तो वे उनकी जान को झाड़ का कांटा बनकर चिमट गयी।

"बेकार परेशान हो रही हो। मेरी बेटियां हैं, अगर कुछ दिला भी दिया तो क्या गजब हो गया। क्या आमना, फ़रीदा को नहीं दिला देता?" एहसान साहब ने कहा।

"मगर मासूमा ही आपकी लाडली बेटी है, जुबैदा और हलीमा सौतेली है? और सलीम तो खैरात का है! इसी कुतिया को सारी चीजें दिला दीं।"

"भई तुम तो जान को आ जाती हो।···अब तुमसे बात की जाय तो कैसे। दरअसल वह अहमद भाई मेरे दोस्त है न···उन्होंने···उनका जनरल स्टोर है···माने ही नहीं। सलीम मियां को हाकी स्टिक और मिकैनो का सेट पसन्द आया···बस दिला दिया उन्होंने।"

"कौन अहमद भाई?"

"जनरल मर्चेन्ट! बांदरा में रहते है, लखपती हैं···एक स्टोर मार्केट में है, एक कोलाबा में। बांदरे में फर्नीचर की दुकान है। बड़े आदमी है···"

बेगम सन्नाटे में रह गयी।

"ऐ है।" वे बोली—"मुझसे कहा भी नहीं। हिम्मत नहीं पड़ती थी आपसे कहने की।···लड़कियों के वली-वारिस अब आप ही हैं।···इनका कुछ इन्तजाम हो जाय तो···मगर मेरे पास देने-दिलाने को कुछ नहीं···"

"हां हां, उसकी फिक्र न करो।" वे कुछ लज्जित-से हो गये, "फ्लैट अभी खरीदा है उन्होंने दादर में—ओनर शिप पर।"

बेगम के दिल से दुआओं के ढेर निकल पड़े। बच्चे सो गये, वे एहसान साहब के पास बैठी गिलौरियां बना-बनाकर अपने हाथ से मुंह में देती रहीं।

"उन्हें लाइये न एक दिन।"

"तुम्हारे पीछे तो कई बार आये···भई मैंने सोचा, यह मौका हाथ से न जाये तो अच्छा।"

"खैर आप घर के मालिक हैं। मगर कल उन्हें खाने पर बुलाइये।"

अहमद भाई सूरत वाला, दूसरे दिन आये। कोई पैंतालीस साल उम्र; मैला पायजामा, कत्थई अचकन, रूमी टोपी पहने।

उन्हें देखकर बेगम धक्क-से रह गयी। सोचा—मेंहदी की जगह यह अल्लाह का बन्दा ख़िज़ाब लगाये तो इतना भोंडा न लगे।

अहमद भाई एक नेकलिस लाये थे, जो उन्होंने मासूमा को दे दिया।

"ऊ...हम नहीं लेते।" मासूमा ठुनकने लगी।

"क्यों जी ?" अहमद भाई पान भरे दांत निकोस कर बोले।

"क्यों लें ?"...हमें नहीं अच्छा लगता।"

"नईं अच्छा लगता तो दूसरा लायेंगा बाबा।"

"हम दूसरा भी नहीं लेंगे।" मासूमा खिलखिलाकर हंसी और कमरे से बाहर भाग गयी।

अहमद भाई इस अदा पर लोट-पोट हो गये।

"आज छोकरी को जोरू ले जावे ? जरा तुम बोलो न।" उन्होंने ठुनक कर एहसान साहब के कान में कहा।

"अमा ज़रा लगामें दाब के,...हां ! वरना यार, सारा मामला चौपट हो जायेगा।"

"साला पैसा ज्यास्ती मांगता तो वोई बात नहीं...हम देगा बाबा !" अहमद भाई बिलबिलाये।

"अरे यार पैसे की बात नहीं। ऊंचे घराने की लौंडिया है...सलोना बरस लगा है। किसी ने आज तक उसका आंचल भी नहीं देखा। इतनी तावली नहीं चलेगी, जल्दी का काम शैतान का।" एहसान ने समझाया।

पर जब बेगम को एहसान मियां की दल्लाली का पता चला तो उनकी सूखी आंखों में शोले भड़क उठे।

"सूरत तो देखो भड़ूए की...मेरी नाजुक-सी बच्ची को बस यह कीड़ों भरा कबाब ही रह गया है, मुआ कल की लौंडिया से शादी करके दाढ़ी को कालिख लगवायेगा।"

मगर बड़ी मीठी ज़बान में एहसान मियां ने समझाया कि अहमद भाई ऐसे कमीने नहीं, जो निकाह करने की गुस्ताखी करें। निकाह तो वह कर भी नहीं सकते। उनके ससुर बड़े असर वाले आदमी हैं, बंदिया पर एक बाल

नही छोड़ेंगे।

फिर तो बेगम शितावा बन गयीं, हर तरफ़ चिनगारियां बरसने लगीं—उन्होंने इतना ही बहुत किया कि एहसान मियां को निकालते वक़्त जूते नहीं लगवाये।

दो

अहमद भाई की आंखो मे आंसू थे।

"तुम हमको उल्लू का पट्ठा समझता है साला !···पहले बोला छोकरी मिलता, फिर बोला नही मिलता···यह क्या लफड़ा है।"

"धीरज का काम है सेठ। पक्का फल कितने दिन डाल पर लटका रहेगा, तुम मेरे पर भरोसा रखो। ऊंचा माल फुटपाथ पर नही मिलता सेठ···सब्र तो करो कुछ दिन।"

"अच्छा बाबा···सबुर करेगा···पण कितना रोज।" अहमद भाई सच्चे आशिक़ की तरह आह भरकर बोले।

"रीटा के यहां बाल-बच्चा होने वाला है सेठ,···वह साली दंगा मचायेगी ···पहले उसका मामला ज़रा ठंडा पड़ जाने दो।"

"तुम क्या बात करता···साली रीटा का हम अक्खा खर्च देता है। और फिर भी देगा ! तुम्हारे को उसका क्या वरी करने का।···कुछ लफ़ड़ा नहीं करेगा···हम पीर भाई से बात भी किया···वह साला फ्लैट का एडवांस भी ले लिया हमने।"

"सांताक्रुज़ वाला फ्लैट आप बेच रहे हैं।"

"नही बेचे तो क्या करे ? अपना फ़ादर-इन-ला बोत बूमाबाम करता। साला छोकरी एकदम बदमास !"

"कौन-सी छोकरी ?" अहमद भाई की बात समझना हंसी-ठट्ठा नही था।

असल बात यह थी कि रीटा से उनका दिल भर चुका था। "बड़ी खिट-खिट करती है।" बहुत दिनों से सेठ को शिकायत थी कि उनकी सगी बीवी इतना सवतिया डाह मे नही जलती, जितनी रीटा सुलगती थी। उसने उनके पीछे जासूस लगा रखे थे। पीर भाई उसके पुराने चाहने वालो में से थे। उनसे राह-रस्म बढी और महमद भाई ने बड़ी खुशी से मकान के दूसरे सामान के साथ रीटा को उन्हें सौंप दिया। अब उसके बच्चा होने वाला था, जिसका इलजाम दोनों अपने ऊपर नही लेना चाहते थे। रीटा का एक दोस्त आया करता था, जिसे वह अपना भाई बताती थी, पर बाद मे मालूम हुआ, वह किसी समय उसका मंगेतर था। कुछ लोगों का ख़याल था, उसी ने रीटा को बरबाद किया था। छः साल तक ग़ायब रहा, अब लौटकर आया तो फिर चालू हो गया कमबख्त। होने वाला बच्चा उसी का था। महमद भाई उधर कई महीनो से मिले ही नहीं थे उससे। एकदम उससे जी ऊब गया, सूरत देख कर बुखार-सा चढने लगता था। पीर भाई बिल्कुल दीमक खाये लगते थे, पर अपनी जायदाद के खुद मालिक थे। बीवी मर चुकी थी, वे तो शादी करने को भी तैयार थे पर रीटा ही टाल गयी। शादी हो गयी तो बेचारे पीर भाई को दूसरी रखनी पड़ेगी।

"फिर भी सेठ, ऐसी लड़की आसानी से नही मिला करती है। मेरे ऊपर भरोसा रखो, मैंने कड़िया कसनी शुरू कर दी हैं। बस कुछ ही दिन मे तुम्हारा काम बन जायेगा।

पर महमद भाई का मुह फूला ही रहा।

"क्या साला रूपचन्द को कितना छोकरी से इन्टरड्यूस कराता है लाल जी, उसका स्टंट फिल्म वाला। यह साला सोशल फिल्म एकदम कंडम होता है। हमको रूपचन्द बोला, हमारे साथ आ जाओ। ऊ साला खंडाला जाता लोकेशन देखने को—अच्छा छोकरी-बेकरी लेकर। हमको दो केस बियर और व्हिस्की को बोला, हम बोला भाई काजू मिलेगा, व्हिस्की अगले हफ्ते देगा। "क्या दमादम छोकरी है। महमद भाई ने लडकियां और बोतलें उलझा दीं।

"रूपचन्द एक चोर है" लालजी सर पीट रहा था कि मुझे कहीं का नहीं

रक्खा। हुंडी-पर-हुंडी लिखाता जा रहा है, पैसा निकालता नहीं। सात दिन से सेट खड़ा है और साइड हिरोइन गायब"'बोलो तो कहता है, दूसरी ले लो। अब भला बताइये, बीच पिक्चर से, कहता है, दूसरी ले लो।"

"दूसरी तो लेना ही पड़ेगा।"'हें हें हे।" अहमद भाई हंसे।

साइड-हिरोइन रूपचन्द से बहुत जल्दी ब्याह करने वाली थी। पर एहसान भाई को मालूम था, रूपचन्द दूसरी शादी नहीं कर सकता। बिल पास हो चुका।

अहमद भाई को समझा-बुझाकर एहसान साहब ने कड़ियां कसने का नया प्रोग्राम बनाया और उसपर तेजी से अमल करने लगे।

बेगम कमर तक दलदल में फंसी हाथ-पैर मारने की कोशिश कर रही थीं। मगर हल्की-सी जुम्बिश भी उन्हें और नीचे खींच रही थी। अजगर का मुंह चौड़ा होता जा रहा था। छः-सात महीने का किराया नहीं दिया था, बावर्ची रोज गुर्राता, कमबख्त नमक की डली में से भी अपना हिस्सा निकाल लेता था। गोश्त लाता, जैसे छीछड़े, कूड़े पर से तरकारी उठा लाता और उनसे पूरे दाम लेता। मार्केट में गली-सड़ी तरकारी का लोग ठेका ले लेते हैं, यह तरकारी टोकरों में भरकर होटलों में पहुंचा दी जाती है या गरीब लोग औने-पौने खरीद लेते हैं उसमें कभी-कभी अच्छे-खासे तरकारी के टुकड़े भी मिल जाते हैं। बेगम जानती थी कि बावर्ची अपनी तनखाह के पैसे तो निकाल ही लेता है। फिर भी कुछ कहने की हिम्मत नहीं होती थी। वह एहसान साहब से ही कुछ दबता था, अब एहसान साहब भी कुछ चुप-चुप-से नजर आ रहे थे इसलिए वह और शेर होता जा रहा था। लड़कियों ने भी दो-चार बार शिकायत की कि वह वक्त-बेवक्त उन्हें ताका करता है। दरवाजों के शीशों पर सफेद वार्निश की हुई थी। वह दो-एक जगह से किसी ने खुरच कर बाकायदा एक आंख से झांकने का इन्तजाम कर लिया था और आमतौर पर जब लड़कियां कपड़े बदलती होतीं तो इन खुरचे हुए हिस्सों में कालोंच भर जाया करती थी। बच्चों की फ़ीसें नहीं गयी थीं और नाम कटने की धमकियां

आ रही थीं, डाक्टर का बिल तो साल भर का चढ़ गया था। एहसान साहब ने ही उनके लिए खाता खुलवा दिया था। धीरे-धीरे बिल बढ़ता रहा, ख़बर ही नहीं हुई। दूध वाले ने खड़े-खड़े पैसे रखवा लिए।

एहसान ने बहुत नाक-भौं चढ़ायी।

"मेरे पास कारून का खज़ाना तो नहीं है।...मैं भी बाल-बच्चों वाला आदमी हूं।" उन्होंने बड़े विवश स्वर में कहा।

मगर बेगम की कमान नहीं झुकी। उन्हीं दिनों किसी ने राय दी थी कि लड़कियों को फिल्म में डालो, बड़ी कामयाब रहेगी। उस समय शिवाजी पार्क और दादर में कई प्रोड्यूसर रहते थे, बारी-बारी वे सभी से मिलीं। रंजीत स्टुडियो की खाक छानी। हबीब से उनका हैदराबाद से ही परिचय था, वे उसके साथ मुझसे भी मिलने आयी पर हमारे फिल्म की कास्टिंग हो चुकी थी। दूसरे उस वक्त जिस अन्दाज से उन्होंने अपने ऊंचे खानदानी होने की डींगें मारीं, उससे जी जल उठा, ऐसा मालूम होता था, वे मासूमा बानो को फ़िल्मी दुनिया में लाकर फिल्म-लाइन पर ही नहीं मेरी सात पुश्तों पर एहसान कर रही है। दूसरे वे समझती थी कि बस तुरन्त ही कान्ट्रेक्ट हो जायगा और पेशगी मिल जायगी पर हफ्ते भर तक तो प्रोड्यूसर से मिलने की नौबत ही नहीं आयी। रोज जाकर स्टुडियो में बैठी सूखा करतीं। मुलाकात तो दूर रही, कोई नज़र उठाकर भी न देखता, फिर झावड़झिल्ले कपड़े पहने शर्मायी लजायी मासूमा को कौन गौर से देखता?

बेगम के तीहे ने और काम बिगाड़ दिया। वे हर आदमी पर अपना बेगमाती रोब जमाना शुरू कर देतीं, अनाड़ी नायिका–भला मासूमा जैसी लड़की को क्या कुछ बना पाती। फलस्वरूप कर्ज बढ़ता गया। एहसान बिल्कुल रूठ गये, मकान वाले ने तकाज़े करने शुरू कर दिये, बच्चों के नाम स्कूल से कट गये, पैदल स्टुडियो की खाक छानते-छानते जूते घिस गये, किसी ने गौर से मासूमा को देखा तक नहीं। पर जिस चीज ने बेगम की कमर तोड़ दी, वह शौहर की शादी की ख़बर थी। बड़े मियां ने एक अट्ठारह बरस की कोमल-सी लौंडिया से निकाह कर लिया और बेगम से पक्का वायदा कर लिया कि वे जब चाहेंगी, उन्हें तलाक़ दे देंगे।

उस दिन वे पहले तो कमरा बन्द करके रोती रहीं, फिर उठकर मुंह-हाथ धोया, चोटी की और खानसामा को एहसान साहब के पास भेजा। खानसामा अकड़फू दिखाने लगा तो उन्होंने वह जोर की डाट बतायी कि भागा बेचारा, उसे क्या पता कि चन्द घंटों मे बेगम कहा-से-कहा पहुंच चुकी हैं।

एहसान आये तो बेगम माथे पर कोहनी का छज्जा बनाये लेटी थीं।

"अल्लाह! क्या दिमाग़ हो गये हैं हुजूर के, बुलावे भेजने पड़ते हैं। अब तो मैं इन्विटेशन कार्ड छपवा कर रखूंगी, वक़्त-बेवक़्त भेजना पड़ जाये तो..."

एहसान साहब ने ठंडी सांस भरी और वहीं क़दमों पर ढेर हो गये।

उसी दिन बेगम की खानदानी झिझक ने दम तोड़ दिया। उन्होंने हामी भर ली, फ्लैट बच्ची के नाम होगा। एक हजार का बंधा खर्च हर महीने मिलेगा, लड़की उनकी मरज़ी के बिना रात को बाहर नहीं रहेगी।

शायद इस तरह उन्होंने अपने शौहर से बदला ले लिया। उधर वे किसी की अठ्ठारह बरस की कोंपल को खरल कर रहे थे, इधर उनकी उसी उम्र की बेटी के दाम लग रहे थे। बड़े मियां को खबर मिलेगी कि साहबज़ादी ने धंधा शुरू कर दिया है, तो मजा आ जायगा।

"आज?···नहीं नहीं···मोहलत चाहिये!" वे एहसान के प्रस्ताव पर भड़कीं।

"तुम्हारी मोहलत ने तो मेरा तख्ता कर दिया।" एहसान झल्लाकर बोले—"हरामजादा साइनिंग मनी तक देने को तैयार नहीं। कहता है, मेरा कुछ इन्फ्लोयन्स ही नहीं,···ऐसे आदमी का क्या भरोसा।"

जब डाक्टर जख़्म छेड़ने के लिए नश्तर बढ़ाता है तो मरीज गिड़गिड़ा कर उसका हाथ थाम लेता है—ज़रा ठहर जाइये···बस ज़रा···

पर आपरेशन तो होना ही है। डाक्टर कितने दिन ज़रा ठहर सकता है?

"लड़की की तबीयत ज़रा ख़राब है।" एहसान ने अहमद भाई को बहलाया।

"अरे हटाओ साली को···हम आज पूना जाता है।" अहमद भाई बमक गये।

रेस का सीज़न उधर ही रहेगा। हम सोचता है, उधर नवयुग स्टुडियो मिलता है, सो ले लेवें।"

"अरे हटाइए भी। नवयुग में क्या धरा है, कूड़ा फेंकवाने में ही आधा पैसा उड़ जायगा। और वह मिसेज़ मिञ्चल आपको उल्लू बना रही है। घुना हुआ माल है उसके पास...घिसी-पिटी गोरों की जूठन ऐंग्लो-इंडियन छोकरिया और फिर सेठ, साझे का माल तुम्हें हज़म न होगा।"

अहमद भाई ख़ानदानी डरपोक थे, कुछ सहम गये।

"ऐसी भी क्या तावली है सेठ। सनीचर को छोकरी चालू हो जायेगी।" उन्होंने आँख मारी।

"मखौल करता है हमसे।" अहमद भाई शर्माकर मुस्कराये।

"तुम्हारे सर की कसम।...अच्छा चलो, मुझे सामान दिलवा दो।...सेट कल तक खड़ा हो जायगा।"

ये सेठ समझते हैं अक़्ल का ठेका बस इन्हीं के पास है। हर चीज़ पर निगाह रखेंगे। हर सामान खुद जाकर अपनी आंखों के सामने खरीदेंगे ताकि प्रोड्यूसर ठग न ले। मगर प्रोड्यूसर भी घाघ होते हैं, वैसे तो कह देते हैं कि जब तक फिल्म का बिज़नेस नहीं हो जाता, वे स्वयं कौड़ी नहीं लेंगे बस प्रोडक्शन पर जो ख़र्चा होगा, वही फिनान्सर को देना पड़ेगा।

सेट के लिए बीस हज़ार की लकड़ी आयेगी। पहले तो अहमद भाई ने खुद अपने आपको ठगा, यानी पन्द्रह हज़ार की लकड़ी ख़रीदी और रसीद बीस हज़ार की बनवायी, अब वह पन्द्रह हज़ार की लकड़ी जब एहसान साहब वसूल करने गये तो उन्होंने दस हज़ार की लकड़ी लदवाई, बाकी चार हज़ार में पांच हज़ार की लकड़ी वापस कर दी, एक हज़ार दुकानदार को बचे। यह लकड़ी स्टुडियो लायी गयी। अब पता लगाया गया कि किस-किस को लकड़ी चाहिए। चुपके-चुपके वह दस हज़ार की लकड़ी इधर-उधर बारह हज़ार में खपा दी गयी, सेट के लिए थोड़ी-सी रख ली। अहमद भाई चेक करने आये तो जिसका भी काम चालू हुआ, वही दिखा दिया। मिस्त्री ने भी हां-में-हां मिला दी कि सेट अहमद भाई के खाते में है।

यही कॉस्ट्यूम के मामले में हुआ करता है। यार दोस्तों से कपड़ों के

कैश-मीमो जमा कर लिए और दिये सेठ को। यही फिर इनकम-टैक्स में काम आते है। वैसे सेठ ज्यादा चालाक हुआ तो दुकानदार से मामला फिट करना पडता है, तीन हजार के कपड़े का बिल वह चार हजार का बना देगा, पांच सौ उसके और पाच सौ आपके। कोई सेठ बड़ा चालाक होता है वह इस बात पर अड जाता है कि सारा कपड़ा उसके चाचा की दुकान मे खरीदा जाय और मामा की दुकान से सिलवाया जाय ताकि बेईमानी की गुंजायश ही न रहे। अब अगर सेठ फस चुका है और उसका रुपया लग गया है तो बस हर कपड़े को कैमरामैन से मिलकर रद्द करवा दीजिए।

"नही साहब यह नही चलेगा चाकी हो जायगा।" कैमरामैन कह दे तो सेठ बेबस हो जायगा। हालाकि चालीस फ़ीसदी सूद ले रहा है, फिर भी सेठ चाहता है, जितना पैसा दबा जाय, वही उसका मुनाफा है, वह उस फिल्म की गर्दन मे हर खर्च बाधना चाहता है, अपने नौकरो की तन्खाहें, बाल-बच्चो का खर्चा, घर में आफिस के बहाने किराया...सैर-तफरीह का सारा खर्च... अपनी रखैलो के लाड-प्यार का खर्च—सब फिल्म पर!

इधर प्रोड्यूसर भी इसी चक्कर मे रहता है कि जो हाथ आ जाये, वह उसका, फिर कौन देता है। डिस्ट्रीब्यूटर को तो सिवाय जबरदस्त 'हिट' के किसी फिल्म मे मुनाफा दिखता ही नही। जाहिर है कि जब एक फिल्म पर इतने गिद्ध मंडरा रहे हो तो वह किस किस्म की बनेगी। रिलीज होकर पहले हफ्ते मे ठप्प हो जायेगी साथ-ही-साथ प्रोड्यूसर और फिनान्सर भी ठप्प।

बड़ी मुश्किल से घंटों सर खपाने के बाद अहमद भाई को शीशे में उतार लिया गया।

तय हुआ कि इधर वह दो गाने रिकार्ड करवायें उधर मासूमा उनकी।

हालाकि ये दो गाने क्रेडिट पर रिकार्ड हो रहे थे। आशा भोसले के हाथ-पैर जोड़े तो वह इस शर्त पर गाने को तैयार हो गयी कि बम्बई की टेरीट्री से चुकता हो जायगा। स्टुडियो और कच्चा माल तीस फीसदी सूद पर मिला ही हुआ था, म्यूजीशियन भी क्रेडिट देने पर तैयार हो गये। लीजिए गाने रिकार्ड हो गये।

बेगम सारी रात बालकनी में टहलती रहीं। हामी तो भर ली, मगर होगा कैसे? सीधी मासूमा से धड़ से कह दें? मुंह नहीं पड़ता। कई बार चाहा, उसे जगाकर छाती से लगायें और समझायें, मगर क्या समझायें? सारी उम्र तो यही नसीहत की—बेटी! औरत का जेवर उसकी इज्जत है जान जाये, पर लाज न जाये।...आज उससे कैसे कहें कि अब तेरे सिवा जिन्दगी का और कोई सहारा नहीं, तुझे कुरबानी देनी होगी, छोटे बहन-भाइयों की नाव पार लगाने के लिए पतवार बनना होगा।

नहीं, यह उससे न होगा।...रोते-रोते सुबह हो गयी।

दूर कृष्णा मिल का फाटक खुल रहा था और रात पाली के मजदूर चूसी गंडेरियों की फोक की तरह मरे कदमों से निकल रहे थे—ताजा-दम बूढ़े, जवान, लांग कसे औरतों के हंसते हुए गोल फाटक में दाखिल हो रहे थे। सुबह की सफेद रोशनी में सड़क पर पड़े चाट के कागज और पत्ते काली सड़क पर कोढ़ के दागों की तरह उभर रहे थे। एक छिले हुए कसेरू जैसा कुत्ता खंभे पर टांग उठाकर मूत रहा था।

बेगम पलट कर कमरे में आ गयीं। मासूमा पर अनायास नजरें जम गयीं क्या बेसुध मीठी नींद में डूबी थी, उलझे हुए बालों से आधा मुंह ढका हुआ था, गुलाबी होंठों के बीच आगे के दो दांत चमक रहे थे, क़मीज़ का घेर बगल में दबने के कारण गला खिंच रहा था। झुककर उन्होंने उसके गले के बटन खोल दिये, एक—दो—तीन—सफेद-सफेद, भोला-भाला कुंआरा सीना जाने किन प्यार-भरी धड़कनों से कांप रहा था।

वे पट्टी से लगकर खड़ी धारों-धार रोती रहीं। बम्बई का जल्दबाज सूरज खिड़की से झांका, खिड़की में पड़ा हुआ चीथड़ा हिला और जैसे दूध पर कौड़ियाला सांप लहराने लगा, सहम कर उन्होंने बच्ची को चादर से ढक दिया।

क्या धूम-धाम थी। तीन बेटों पर बेटी हुई थी, नाजुक-सी। पेट में थी तभी अन्दाजा हो गया था कि बेटी होगी, क्योंकि बेटों की दफा पेट छाती तक चढ़ आता था। मासूमा...नाजुक चिड़िया-सी पेट में मालूम भी तो न होती थी, जरा-सा दूध पीकर पेट भर जाता था, ढेरों दूध हुआ भी था। मा के ज्यादा दूध उतरे तो कहते हैं बच्चा बड़ा भाग्यशाली होता है, रुपये की रेल-पेल रहती है। ज्योतिषी ने माथा देखकर कहा था, बड़ी किस्मत वाली बच्ची है बरकत लायेगी, दरवाजे पर हाथी झूमेगा। हाथी—अहमद भाई तो बिल्कुल खच्चर थे।

तेरहवीं बरस के फूल पहने, तभी से बात आने लगी। बड़े-बड़े नवाबों के पैग़ाम, उंह, ये नवाब निकम्मे होते हैं। किसी आई०सी०एस० से करेंगे इसका ब्याह। मुबारक तो हुई निगोड़ी उसी महीने तरक्क़ी हुई थी। साल भर की थी तो ख़िताब मिल गया, फौज की कमान मिल गयी। हुजूर निजाम की मेहरबानियों की बारिश होने लगी।

नौ दिन पहले नौबत रखवाऊंगी। बिल्कुल पुरानी शान से शादी होगी, नौ दिन मांझे बैठाई जायगी। दिल्ली का उबटन मशहूर है, मेंहदी घर की झाडी से निकलेगी, दादा अब्बा ने पोती के सुहाग के लिए कलम लगायी थी, अब तो सारी बरामदे के नीचे फैल गयी थी। ईद-बकरीद को लड़कियां मेहदी सूंतने लगतीं, तो जी डरता था कि कहीं मुदिया जड़ न हिला दें। बड़ों के हाथ की लगायी मेंहदी है शादी तक रह जाय तो जानो।

लेकिन पुलिस एक्शन के समय जब तन-बदन की सुध न रही तो सारे पेड़ सूख गये, कोठी तीन महीने ख़ाली ठंडार पड़ी रही। जड़ों में दीमक लग गयी, जब पुराना सामान निकाल कर नीलाम कराने गयी तो जहां मेंहदी लहराया करती थी, उधर गुसलख़ाने की नींव पड़ी थी और मेहदी का सूखा झाड़ कूड़े पर, हाथ लगाते ही पत्तियां झर-झर बिखर गयी। जी धक् से हो गया। ऐसी अरमानों की मेहदी जल जाय, कोई अच्छा शगुन नहीं।

शादी में बारात को सात तरह के खाने देने का इरादा था। पुलाव, क़ोर्मा, तन्दूरी मुर्ग़, शिकमपुर, शाही टुकड़े, सीख कबाब...और...और... उन्हें खानों के गर्मा-गर्म भबके आने लगे। शाम को सबने मस्का-पाव के साथ

चाय पी थी। माल की पक्की वसूली से पहले एहसान साहब कौडी का विश्वास करने को तैयार न थे, वह तो ईरानी रेस्तरा का मालिक अब तक मेहरबान था। क़र्ज़ मय सूद एक दिन वसूल हो जायगा। जब किसी पेड़ में पक्के-पक्के फल, फूल रहे हों तो पास-पडोस वाले लोटा भर पानी से उसकी जड़ सींच देने में फायदा ही सोचते हैं।

बकरे की मां कब तक खैर मना सकती थी। आखिर वो दिन भी आ ही गया, योजना के अनुसार उन्होंने सलीम और दोनो लडकियो को शाम ही से एहसान साहब के यहा भेज दिया था, जहां एहसान साहब की राय के अनुसार उनकी बेटियो ने रात को उन्हे रोक लिया। मासूमा भी जाने की जिद करने लगी, पर बेगम ने उसे डांट दिया। सारी बातें एक संयोग-सी लगें, इसलिए उन्होने मासूमा से अच्छे कपडे पहनने को भी न कहा। वैसे कायदे से लोग बलि के बकरे को भी हार-फूल पहनाते है। शाम को जब एहसान मिया अहमद भाई के साथ दाखिल हुए तो बेगम को पसीने छूट गये, जैसे बेटी की जगह स्वयं उनकी इज्जत पर हमला होने वाला है।

थोड़ी देर इधर-उधर की गपशप होती रही।

"इंडस्ट्री का पटिया गुल-हो रहा है। एक प्रोड्यूसर को एक्सट्रा आर्टिस्टों ने मारते-मारते छोड़ा'''कास्ट्यूम इन्चार्ज ने कपडे चुराकर बेच लिये, उसका साल भर का पैसा मार लिया था।'''अब तो सिवाय हीरो-हीरोइन के या उनके चेले-चपाटों के किसी की दाल फिल्म लाइन में नहीं गलती।'''डिस्ट्रीब्यूशन भी यही लोग संभालने जा रहे हैं। एक दिन ऐसा आयेगा, जब सिनेमा हॉल भी यही लोग खरीद लेंगे।"

"हा साहब, यही होगा।"

पर अहमद भाई अपने मतलब की बात के इन्तजार मे बैठे पहलू बदल रहे थे, उन्हें इस टाल-मटोल से झल्लाहट चढ रही थी, दूब पिये हुए थे। उसपर से बार-बार जेब से फ्लास्क निकाल कर, पीठ मोड़ कर चुस्की लगाये जा रहे थे। मासूमा "ट्रू-स्टोरी" का एक पुराना अंक लिये धुंधले बल्ब की रोशनी

में औंधी पड़ी थी, ग्रहमद भाई को जैसे चुल हो रही थी। कभी गुद्दी खुजाते, कभी मूछें टटोलते, कभी रानो में गुरगुराहट होने लगती, उनकी ग्रांखो की पुतलिया ठोकरें खा रही थी। बेगम एक-एक सेकेंड टाल रही थीं, जैसे डाक्टर का नश्तर उन क्षणों में गुठल तो हो ही जायगा, या कहीं ग्रासमान से उनके सारे दु खों की दवा टपकने लगेगी। मगर कब तक—ग्रहमद भाई जोर-जोर से एहसान साहब की पसलियो मे कोहनियां मार रहे थे। वे ठंडी सास भरकर उठीं, एक बार मन मे ग्राया कि ग्रहमद भाई के मुह पर थूक दें ग्रौर कहे—"हरामजादे! तेरी भी तो कुंग्रारी वेटियां है जा, उनपर एक नजर डाल ग्रा। वो, जिनके दहेज के लिए तूने ग्रलमारियां भर रखी हैं, क्या यह रुपया उन्ही ग्रलमारियो में से निकाल कर मेरी मासूमा को खरीदने ग्राया है। जैसे वह भी ग्राटे की बोरी है···या घी का कनस्तर ?

लेकिन पानी सिर से गुजर चुका था, डूबते-डूबते उभरकर उन्होंने कह ही दिया—"मैं ग्रभी ग्रायी···जरा लक्ष्मीबाई मे थोड़े-से पापड़ ले ग्राऊं!"

बावर्ची को पहले ही छुट्टी दे दी थी। मासूमा को कोई शक भी न हुग्रा ग्रौर वे चली गयी।

"भई मेरी रिकार्डिंग की डेट है, कोई घन्टे भर मे ग्रा जाऊंगा, उन्होंने मासूमा को सुनाने के लिए ऊंची ग्रावाज मे कहा—"ग्रहमद भाई तुम बैठो लडकी ग्रकेली है बेगम ग्रा जायें तो तुम भी ग्रा जाना।···जरा डांस का गाना सुनना···क्या गाया है शमशाद ने कसम से, नौशाद की ट्यून कुछ चीज नही उसके ग्रागे।—बड़ी धामू ट्यून है···थीम साग है, जब हीरो मोटर कार से जख्मी हो जाता है तो यही ट्यून सैड हो जाती है···ड्रीम साग में इसी ट्यून को वाल्ज में बनवा रहा हूं दोगाने के लिए।···फिर कमाल देखिये, यही ट्यून जब हिरोइन के बच्चे को बुख़ार ग्रा जाता है तो लोरी की तरह···"

हां हां, जानता है बाबा···जाग्रो न ग्रब, नाहक को खोटी करता है।" ग्रहमद भाई बेचैन होकर बोले।

ग्रच्छा ग्रच्छा। एहसान भाई पर ग्रोस पड़ गयी।

वे भी चले गये।

फिर ऐसा मालूम हुग्रा, घर मे कोई नहीं···पूरे मोहल्ले में कोई नही,··· सारे बम्बई में कोई नहीं।

सिर्फ़ धुंधले, मक्खियों के गू में सने हुए बल्ब की रोशनी में झुकी हुई बेख़बर मासूमा और, और ग्राज भरे अहमद भाई'''

दूर कहीं किसी घायल पिल्ले को किसी ने ठोकर मारी और वह ट्याउं-ट्याउं करता गटर में घुस गया।

बेगम सिर झुकाये तेज़-तेज़ बस स्टैंड की तरफ जा रही थी। उनकी आंखों से आंसू उबलकर रास्ते को अनजान बना रहे थे, किसी ने अंधेरे में उनके आंसू नहीं देखे।

बस से उतर कर बेगम देर तक दादर की छोटी-छोटी दुकानों पर छुट-पुट खरीदती रही। फिर खुदादाद सर्किल के दो-चार चक्कर लगाये। सोचा कि ब्रॉडवे सिनेमा में शो ही देख डालें मगर एकदम ऐसी वहशत हुई कि फिर लौट पड़ी।

शिवाजी पार्क में अनगिनत जोड़े साथ-साथ टहल रहे थे। सामने कैडिल कोर्ट के आगे कुछ गुंडे ढोल की थाप पर पवाडा गा रहे थे। वे सीधी समुद्र पर निकली चली गयीं। ठंडी रेत पर बैठकर न जाने क्यों वे फूट-फूटकर रोने लगीं।

वे कितनी अकेली थीं? दुनिया में किसी को भी एहसास न था कि वे अकेली हैं और उनकी मासूमा'''? पर दुनिया उनको भूल चुकी थी। नवाब साहब ने किन अरमानों से हाथ-पैर जोड़कर अब्बा से उन्हें मांगा था। कभी बात न की, आज जब मासूमा की किस्मत का फैसला हो रहा है, वे शायद अपनी कमसिन दुल्हन को पहलू में दबाये सो रहे होंगे। एकदम गुस्से का तूफ़ान उनके सीने में जाग उठा—"लानत'''धिक्कार हो निकाह पर, क्या धरा है निकाह में। उनका निकाह भी तो बड़े क़ाज़ी साहब ने पढ़ाया था, जो हुज़ूर निज़ाम के अनगिनत निकाह पढ़ा चुके थे, आज वह निकाह रेत के ज़र्रों से भी ज़्यादा बे हकीकत हो चुका था।

लोग आहिस्ता-आहिस्ता जा रहे थे। दो-चार मवाली देर से उनके गिर्द मंडरा रहे थे। एकदम से कलेजा धक्क से हो गया, यह क्या बेवकूफ़ी की उन्होंने। रुपये साथ लिये फिर रही हैं, एक-दो नहीं पूरे पांच हज़ार! उन्होंने

हथेलियों पर से रेत झाड़ी। तेज़ कदम उठाती घर की तरफ़ चल पड़ीं।

जब वे घर पहुंची तो सारी बिल्डिंग में अंधेरा हो चुका था। फुटपाथ पर नंगी टांगों की क़तारों को फलांगती वे तेज़ी से बढ़ती गयीं।

हल्की-सी चीख की आवाज़ सुनायी दी और अंधेरे से मासूमा निकलकर उनसे चिपट गयी।

"अम्मी···अम्मी जानी, मेरी अम्मी जानी!" उसने कांपते हुए शरीर का सारा भार उनके हाथों में सौंप दिया। सितारों की मलगजी रोशनी में उन्होंने देखा—मासूमा का ब्लाउज़ जगह-जगह से फटा था, साड़ी में बड़े-बड़े खोंचे लगे थे, बाल नुचे हुए थे, उसकी सफ़ेद रेशमी गर्दन पर खरोंचों के निशान थे, एक कान की लौ से खून बहकर जम गया था जैसे उसे भूखे कुत्तों ने भंभोड़ा हो। वे उसे कलेजे से लगाकर सूखी-सूखी हिचकियां लेने लगीं। उन्हें कुछ याद न रहा बस इतना मालूम था कि वे मां है और उनकी बांहों में थरथर कांपती उनकी बच्ची है।

वे अपनी सारी योजनाएं भूल गयीं। उन्होंने सोचा था, वे उसे डांटेंगी, गालियां देंगी, बदमाश और लफंगी कहेंगी ताकि वे अपनी शराफ़त का भरम बनाये रह सकें। अपने-पाप पर पर्दा डाल सकें, बात संयोगवश घटना बन जाय। जब उन्हें अन्दर पहुंच कर मालूम हुआ कि मासूमा साफ़ बच निकली और उसने अहमद भाई का भुर्ता निकाल दिया तो वह सन्नाटे में रह गयीं।

मासूमा बच गयी।

सारे फ्लैट में ऐसा लगता था, घोड़े दौड़ गये हैं, पानी के सारे घड़े चकनाचूर थे, गिलास लुढ़के पड़े थे, चाय का सेट चूरा हो चुका था, अलगनी के कपड़े कीचड़ में पड़े थे, खिड़कियों के शीशे किरची-किरची!

मारे गुस्से के उनकी आंखों में खून उतर आया। एक ज़ोर का तमाचा उन्होंने मासूमा के गाल पर मारा—जैसे वह स्वयं उनका ही गाल हो।

चुड़ैल!···कुतिया!"

"अम्मी···वह बदमाश···" मासूमा की कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

"चुप, बदमाश की बच्ची। गजब खुदा का, घर-का-घर उजाड़ कर रख दिया, अब तेरे बाप तावान भरेंगे।" उन्होंने बहुआ दोनों हाथों में लेकर कलेजे से लगा लिया।

"या परवरदिगार ! मुझे मौत क्यों नही देता । ये चार-चार मय्यतें मेरी छाती पर धरी हुई हैं ।"'ऊपर से करतूत तो देखो, हरामजादी'"छिनाल !" वे मासूमा पर टूट पड़ी । वह मां जिसने घड़ी-भर पहले अपनी बच्ची की सलामती पर उसे कलेजे से लगाया था, नोटों की सरसराहट से सहम गयी । कल रुपये वापस करने होंगे—फिर क्या होगा ?

उन्होंने मासूमा की कोई बात नही सुनी । वही फटे-पुराने चीथड़े पहने वह चटाई पर झुकी हुई सिसकियां भर रही थी ।

सुबह-तड़के एहसान साहब को देखकर वे ऐसे कांपी जैसे क़साई को देखकर बकरी । लेकिन वे बड़े प्यार से मुस्कुरा कर पास बैठ गये ।

"अभी अहमद भाई के पास से आ रहा हूं, अजब उल्लू का पट्ठा है । साले को मैंने बड़ी डांट पिलाई ।"

चुपचाप बेगम ने नोटों की गड्डी निकालकर एहसान साहब के आगे फेंक दी ।

अरे, यह क्या ?" वह बड़ी तेज़ी से बोले और रुपये गिनने लगे । "अब इसमें हमारा क्या क़सूर है, साला बिल्कुल ही अनाड़ी है । असल में बहुत पी गया था, मैंने ससुरे को बहुत डांटा । यह तो कहो अपना फ्लैट पिछली तरफ़ है और पास वाले नासिक गये हुए है । अगर किसी को खबर हो जाती तो कम्बख्त जेल में धरा होता ।" वह रुपयों को सहलाने लगे । फिर रुपये उनकी तरफ खिसका दिये, "परेशान होने की कोई बात नही, नासमझ है अभी । वैसे रास्ते पर आ जायेगी । तुम मां हो, समझा-बुझा सकती हो ।"

गला न रुंध गया होता तो बेगम कहती कि क्या समझाऊं? किसे समझाऊं ?

"खुदा क़सम, रो क्यों रही हो । मकान वाले से मैंने कह दिया है । वह दोपहर को आयेगा किराया लेने । दो-चार कपड़े-लत्ते तो बनवा लो; ऐसा करो मार्केट चली जाओ, मूलचन्द के यहा मेरा एकाउन्ट खुला हुआ है मैं कह दूंगा उससे ।"

तो अहमद भाई नाराज नहीं। बल्कि उन्हें तो छोकरी की यह अदा बेहद भायी।

"कसम से, क्या दंगाई छोकरी है।" उन्होंने अपनी सूजी हुई नाक पर बर्फ का टुकड़ा रगड़कर कहा। उनके भी सारे कपड़े तार-तार हो चुके थे, फिर भी उन की बांछें खिली जा रही थीं। "क्या साली एकदम हिरनी का माफिक है!" उन्हे ऐसी औरतें बिल्कुल पसंद नही थी जो झट आत्म-समर्पण कर देती हैं।

"पर सेठ, इतना पीकर बच्ची को हलकान करना कहां की इन्सानियत थी ?"

अहमद भाई हें हें करने लगे।

"आज जुह ले जावे।...बाबा उस फ्लैट में अपने को एकदम नहीं चलेगा।"

"आज नहीं।"

"काए को ?"

"बस ऐसे ही।"

"क्या बात करता है तुम...साला पांच हजार लिया...और..."

"मेरे खाते में डाल दो।"

"तुम्हारा खाता में..."

"हां...परसों तक सूरजमल से दिलवा दूंगा। क्या समझते हो, सारे बम्बई में तुम ही एक लखपती हो।' एहसान मियां गुर्राये।

"अरे रे, तुम क्या बंडल मारता...हम कब बोला" अहमद भाई पिचक गये।

"सेठ, सच्ची बात सुनोगे ?"

"बोलो।"

"यह लौंडिया जो है न..."

"हां हां।" अहमद भाई बड़े शौक से आगे खिसक आये।

"वह तुम्हारे बस की नहीं।"

"काए को ?" एकदम फुस्स—हवा निकल गई गुब्बारे की।

"अमां गावदी हो निरे, छटाक-भर की लौंडिया ने मार-मार के भूसा भर दिया।"

"नईं नईं, ऐसा बात नईं। बाबा हम नीट पियेला था, एकदम नीट। हमारे को कुछ दिखायी नईं पड़ा···और छोकरी साला इतना मस्त कि क्या बोले तुमसे। हम जरा हाथ लगाया कि मारा-मारी करने लगी।"

"सोच लो।"

"बस आज जुहू···"

"अमां क्या उल्लू का पट्ठापन किये जा रहे हो। ऐसी-की-तैसी तुम्हारे जुहू की।"

"काए को ?" सेठ भोलेपन से बोले।

"एक सांस तोते की तरह जुहू की रट लगा रखी है। अच्छा ऐसा करो। वह फ्लोरी है न···"

"हमसे साला फ्लोरी का बात मत करो।···क्या थर्ड क्लास छोकरी है। तुम क्या समझता है हमारे को ?" अहमद भाई बुरा मान गये। फ्लोरी एकदम कंडम औरत थी।

"अच्छा बाबा बिगडते क्यो हो ?"

"बिगड़े काए को नहीं। साला पांच हज्जार दिया···कोई कमती है ?"

"अमां तो अब मैं क्या करूं। लौंडिया के हाथ-पाव बाधकर पकडा दू।"

"नईं, ऐसा कब बोला हम···पण जरा बोलो न छोकरी को। ऐसा मारा-मारी एकदम नईं चलेगा।"

"फिर वही मुर्गे की एक टाग।"

"मुर्गा···कौन-सा मुर्गा ?"

"तुम्हारा बाप !" एहसान मियां ने चिढ़कर दो-चार मोटी-मोटी गालियां टिकाईं।

"सुनो !" अहमद भाई बड़े लाड़ से बोले।

"क्या ?"

"तुम्हारे को कुक्को का डांस मांगता पिक्चर मे ?"

"कुक्को का डांस होगा तो पिक्चर शर्तिया हिट समझो।"

"तो फिर ऐसा करो, तुम लेयो साला डांस···एक नईं दो लेयो।"

"मतलब ?"

"अरे मतलब क्या···कुछ भी नईं।···हम क्या बोला ?" सेठ हंसे।

"जुहू ?"
सेठ ने दांत निकोसे।
"हूं।" एहसान मियां बेपरवाही से सिगरेट सुलगाने लगे पर अहमद भाई पर तो मामूमा का भूत सवार था, "बात करूंगा अच्छा।" उन्होंने टाला।
"क्या साला, तुम इतने दिन से बात करता, बात करता। अहमद भाई भड़क उठे—"एकदम चार-सौ-बीस आदमी है तुम !"
और अहमद भाई चुप रहे तो एहसान मियां ने कहा—"हां खूब याद आया।···वह मगनलाल ड्रेस वाले का बिल आया पड़ा है।"
"कोई वादा नहीं···कल देगा चेक···हम ना कब बोला।
"वह मूलचन्द को फोन कर दीजियेगा।"
"मूलचन्द···हम कल उसको चेक दिया···बाबा, तुम हमारे को खलास कर देगा···हम···"
"ओफ्फोह···किस चुगद से पाला पड़ा है। अमा यार पिक्चर के लिए नहीं, बेगम कह रही थी कि लड़कियों के पास कपड़े नहीं, मैंने बादरे में बंगले का इन्तजाम कर लिया है।"
"अच्छा···तो ऐसा बोलो ना !" सेठ हिनहिनाये, "हम शाम को साड़ी पहुंचा देगा···और मूलचन्द को भी फ़ोन कर देगा···पन जुहू···"
"अच्छा बाबा। जुहू भी हो जायेगा।···भेजा चाट लिया मरदूद ने !"

बेगम ने नोटों का बंडल उठाया तो कुछ हल्का लगा। गिना तो तीन हज़ार !
"अगले हफ्ते दे दूंगा। फिल्म की डिलिवरी देनी है।" एहसान साहब मुस्कुराये। मगर बेगम समझ गयी कि वे अपना कमीशन ले गये।
"मगर···"
"क्यों घबराती हो।" उन्होंने बिल्कुल शौहराना अन्दाज में कहा—"शाम को साड़ियों वाला आ रहा है,···तुम देखती जाओ बस।"
"आपको साड़ियों की पड़ी है, यहां हज़ार खर्च जान को लगे है। बेगम को तीन हज़ार कम लगने लगे।

"तुम देखती जाओ"'अल्लाह कारसाज है। सब कुछ हो जायेगा। हां भई वह बंगले का आज तय कर आऊंगा, कब तक शिफ्ट कर सकोगी।

"मुझे कौन-से सामान समेटने हैं।"'नया सेट वहीं जाकर खरीदना पड़ेगा।"

"क्यों खरीदती हो। मेरे पिछले महल वाले सेट का पड़ा हुआ है पूरा फ़र्नीचर, अल्ट्रा मार्डन है। सेठ से कह दूंगा ट्रक मगवा लेंगे।"

"मगर'''"

"मगर क्या?"

"मासूमा'''"

"नासमझ है'''प्यार से समझाना होगा।"

समझाना होगा।'''वह कैसे समझायेंगी। लड़की बालिग हुई तो मारे शर्म के उन्होंने बात भी न की।'''बाकरी बुआ से कहा। उन्होंने समझा दिया। बाकरी बुआ'''ओफ, अच्छा हुआ जो आंखें मुंद गयीं। हर वक्त पीछे पड़ी रहती थीं।

'ए लड़कियो! दुपट्टा सिर पर डालो।'''पाशा, यूं नहीं सर नंगा फिर-तियां शरीफ़ बहू-बेटियां।'

क्या मजाल, जो कोई ऊंची आवाज से लड़की बोल जाये।

'हाय पाशा, गैर मर्दों के कानों में आवाजां जाते'''चुपका बोलो बेटे।'

वे होतीं तो?'''नहीं, बाकरी बुआ नहीं, नवाबी शान नहीं'''कुछ नहीं! कोई नहीं!

मासूमा बानो मुंह फुलाये बैठी दायें हाथ की छंगुली की नाखून पर से क्युटेक्स खुरच रही थी। अहमद भाई दो-चार दिन के लिए सूरत गये हुए थे। वहां से लौटे तो आंख की सूजन उतर चुकी थी, नाक पर भी खुरंड आ गया था और वे उस वक्त अम्मी के साथ बैठे फ़र्नीचर की सूची बना रहे थे। उसे देखकर उन्होंने बड़ी ही बेहयाई से दांत निकोस दिये, वह भन्नाई हुई दूसरे कमरे में चली आयी।

ट्रक आया, घर का कूड़ा-कर्कट सब लादा गया। अहमद भाई की मोटर में सब बैठे। अहमद भाई ने उसे आगे अपने पास बैठाना चाहा, पर वह तिनक कर दूर जा खड़ी हुई। बेगम हंस पड़ीं और सलीम को आगे भेजकर उसे पास बैठा लिया।

"क्या बदतमीज़ी है ?" उन्होंने प्यार से उसकी लट संवारते हुए कहा।

"उंह !" तंग आकर उसने उनका हाथ झटक दिया।

"कसम खुदा की, ऐसा तमाचा मारा होगा कि दांत झड़ जायेंगे। सर पर ही चढ़ी जाती है सुअरिया !"

बंगले में सामान उतर रहा था तो मासूमा एक तरफ खड़ी हो गयी—सबसे अलग-थलग।

"भूल हुई बाबा···माफ कर दो !" अहमद भाई आये।

"हुंह !" मासूमा ने नाक सिकोड़ी।

"बोलो तो उट्ठक-बैठक करें···नाक पकड़कर तीन सलाम करें। हमारे से गलती हो गया, लो, कान पकड़ता है हम।" उन्होंने दोनों कान पकड़कर कहा।

मासूमा को हंसी आ गयी। न जाने उनकी घुग्घू जैसी सूरत पर या अपनी बेकसी पर।

बेगम ने भी समझाया—"कितना कुछ कर रहे हैं अपन लोगों के लिए। ढाई सौ किराया है इस बंगले का।"

"तो वहीं चलिए न, वहां सत्तर रुपया था, और मंहगा मकान क्यों ले रही हैं ?"

"हूं, और वह सत्तर कौन देगा।"

उन्होंने समझाया और मासूमा ने समझ लिया।

सबका गुस्सा उड़न-छू हो गया। फिर वही हंसी-मजाक और कहकहे गूंजने लगे। सुन्दर कपड़ों और गहनों का किस बच्ची को शौक़ नहीं होता? अपनी शक्ति भर उसने बचाव किया; फिर भूल गयी, इतनी नन्ही नहीं थी कि अपनी हस्ती का मोल न जानती।

और फिर एक दिन अहमद भाई के दाम वसूल हो गये और मासूमा बानो नीलोफ़र बन गयी।

बेगम की नवाबी लौट आयी। वही खाने-पीने की रेल-पेल, क़दम-क़दम पर नौकर। सलीम मियां का नाम फ़ौरन बड़े शानदार स्कूल में लिखवा दिया गया, मोटर छोड़ने और लेने जाती। बेगम वही सुबह ग्यारह बजे सोकर उठने लगीं। बस, जैसे कोई बुरा ख्वाब देखा था, आंख खुली तो कुछ भी न बिगड़ा था'''सिर्फ नवाब न थे। तो नाज़ उठाने को एहसान साहब क्या कम थे। अब तो वह, कहना चाहिए की खेती काट रहे थे। इतने साल जितना गहरा कुआ खोदा था, उतना ही मीठा पानी पी रहे थे। पहले तो बेगम का कुछ भार उन पर भी पड़ जाता था। लेकिन अब तो दोनों वक़्त का खाना बंधा था। उनकी पत्नी और बेटी से भी मेल-जोल शुरू हो गया था। उन्हें भी अब विश्वास हो गया था कि एहसान साहब के बेगम से सिर्फ ऐसे ही सम्बंध थे, जैसे एक अभागिन औरत के पति के खास दोस्त के होने चाहिएं। उन्होंने सबके फायदे का खास ख्याल रखा। बेगम ने हाथ खोलकर लेन-देन शुरू किया, जरा-सी किसी की सालगिरह हो जाती और वे बनारसी जोड़े और सोने के जेवर ले दौड़ती।

वैसे अब यह उम्र आ गयी थी कि सचमुच उनके भाई-बहनों जैसे सबंधी रह गये थे। बस, बेगम उनकी एहसानमंद थी। उनके सिवा बेचारी का था कौन? अगर वह न होते तो मझधार से नाव कौन तिराकर लाता।

मगर अहमद भाई कुछ परेशान-से रहते थे। क्योंकि नीलोफर का बर्ताव वैसा ही माशूक़ाना था। वह उन्हें बेतरह छिकाती, वो आते तो बैठी बच्चों के साथ ताश या कैरम खेला करती, कमरे में बुलाते तो टाले जाती। बड़ी मुश्किल से बेगम भेजती तो बात-बे-बात लड़ने लगती, हाथ छोड़ बैठती। बिल्ली की तरह पंजे मारती, रूठकर अम्मा के साथ जा लेटती। अहमद भाई मंडराते फिरते, खुशामदें करते, रिश्वत देते तो वह बहुत ही बेदिली से टाल देती।

अहमद भाई सारी रात कभी नहीं रहे। उनके ससुर का हुक्म था कि रात को जाओ कहीं भी, पर सोओ घर आकर। बारह बजते-बजते ही उन्हें संड्रेला

तरह भागना पड़ता था। कभी अच्छे मूड में होती तो साथ बैठकर शराब भी पीती, गालियां बकती और फिर जूतम-पैजार करती। एकदम भूत सवार हो जाता तो कुत्ते की तरह भूंकने का हुक्म देती और बुरी तरह पीछे पड़ जाती, बेचारे को भूकना पड़ता। फिर वह खूब तालियां बजाती। अपना जूता फेंककर हुक्म देती कि चारो हाथ-पैरों के बल चलकर भूको, फिर मुह से जूता उठाकर लाओ···फिर भूको और जूता पहनाओ। मूड आ जाता तो अहमद भाई खूब-खूब भूकते। दातों से जूता उठाकर लाते और वह फिर फेंक देती। बैठे-बैठे एकदम सबके सामने कहती—"गधे की बोली बोलो।"

"इस टाइम नही। बाद में, बाद में···"

"नही।···अभी बोलो।"

"कह दिया इस टाइम नही···"

"नही···अभी, इसी वक्त···बोलो···गधे की बोली बोलो।"

"दिमाग खराब हुआ है, बदतमीज कहीं की।" बेगम डाटती।

"हमारे बीच मे कोई मत बोलो···हां!" नीलोफर अकड जाती—"मम्मा, आप चुप रहिये।"

"मालूम होता है तेरी शामत आई है।" बेगम गुर्राती।

पर अहमद भाई कहते—"आसिक-मासूक का मखौल है। तुम कायें को बीच मे आता है।" और वह गधे की बोली बोलते, मगर इतनी देर हो चुकती कि नीलोफ़र का मूड खराब हो जाता और वह उन्हे फिर खून थुकवाती।

कभी अहमद भाई एहसान साहब से शिकायत करते। अब वे थक चुके थे, ऐसी उम्र आ गयी थी कि वह खूद माशूक बनते, बीवी-बच्चे उनकी सेवा करते, अदब मानते, पर उनकी तो दोनों तरफ शामत थी। बीवी उधर गालिया देती, बच्चे रत्ती बराबर इज्जत न करते, ऊपर से नीलोफर के जुल्म—तौबाह!!

एहसान साहब ने उन्हे बहुत समझाया कि नीलोफर की बात का यकीन नही। वह एक बदजात लौंडिया है, उसे बहुत सर न चढ़ाओ। मगर अहमद भाई चारो तरफ से जूते-लात खाते-खाते बदहवास हो चुके थे। चन्द महीनों से नीलोफर ने उन्हे बहुत सताया था। एक बार उनके पेट मे ऐसी लात मारी कि बेचारे को हर्निया के आपरेशन के लिए पन्द्रह दिन अस्पताल में रहना

पड़ा। वहां से आये तो बेतरह मजाक उड़ाने लगी, ऐसा बदहवास किया कि डर बैठ गया उनके दिल में, पसीने छूटने लगे। सोने का बरक चढी गोलियों से भी कुछ लाभ न हुआ, उलटा होल उठने लगता, और वह उनकी दुर्दशा पर खूब ठहाके लगाती। गन्दे-गन्दे कष्टप्रद मजाक करती। उधर जिस फिल्म में अहमद भाई ने पैसा डाला, वह डिब्बा हो गया। हालत बिगडती ही चली गयी।

एहसान साहब अपनी समझ में चट्टान पर जमे थे। घर मे बीवी-बच्चे शान-शौकत जमाये थे। उधर बेगम से दिलचस्पी, बस हसी-मजाक तक सीमित रह गयी थी क्योकि हाल ही मे उन्होने एक एक्स्ट्रा लड़की सुमन को एकदम साईड हिरोइन बना डाला था। सुबुक नक्शे वाली सावली-सलोनी सुमन को वड़ाला से उठा लाये थे। उसके पूर्वज सात पीढियो से मछली पकडते आये थे, सूखी लकड़ियां बटोरते-बटोरते वह एकदम एक्स्ट्रा बनी और साल भर के अन्दर प्रोड्यूसरो के चमचों के सर पर चढकर एहसान भाई तक आ पहुची। उनपर उसकी शोख़ी का कुछ ऐसा नशा चढा कि झट उसे रिट्ज होटल मे कमरा लेकर रख लिया। अभी उसके सर की जू भी खत्म न हुई थी कि वह स्लेक्स और टी-शर्ट पहने दो फिल्मी चोटियां गूथे घूमने लगी।

पतिव्रता मिसेज एहसान के कान पर जू तक न रेगी। कमाऊ मर्द को सात खून माफ है, और हालांकि फिल्मे फ्लाप हो रही थी पर एहसान साहब हिट थे। जड़ें शरीफ थी, सारा रुपया इधर-उधर से समेट कर उनके ही हाथ मे दे देते इसलिए वह अपनी जगह खूब संतुष्ट थीं। मर्द जात कही मुंह काला करता फिरे, पर घर-बार से गाफिल न हो तो कैसी शिकायत? बादरा में जमीन ली थी, उसका पट्टा भी बीवी के नाम था कि कभी कोई बुरा वक़्त पड़े, कुर्की हो तो घर का सारा सामान बीवी के नाम—कोई हाथ न लगा सके। एहसान दीवालिया होकर फिर किसी और के नाम से नयी कम्पनी चालू कर देते। पहली कम्पनी उनके अपने नाम से थी, दूसरी में उन्होंने अपने साले का नाम डाल दिया। उल्लू का पट्ठा-सा था बेचारा। जब कम्पनी का दीवाला निकला तो उसकी तो कुछ समझ में ही न आया। एहसान साहब ने

उसे खोखरा पार की तरफ़ से पाकिस्तान भगा दिया। अब यह तीसरी कम्पनी उनके रिश्ते के भानजे-भतीजे के नाम से थी, कर्ता-धर्ता वही थे।

दुनिया भी अजीब है। जब हफ्ते भर बाद एक दिन एहसान साहब महाबलेश्वर से मुमन की आउट-डोर शूटिंग से लौटे तो घर सुनसान पड़ा था। बीवी उनके अत्यन्त विश्वसनीय मुह बोले भाई और प्राइवेट सेक्रेट्री के साथ भाग गयी थी। दोनों लडकियां पड़ोसियों ने तरस खाकर संभाल ली थी, छोटा लडका आया के पास छोड गयी थी, उससे तो यह कहकर गयी थी कि सिनेमा जा रही हैं। सामान घर में था ही कितना, एक ट्रक में आ गया। आया समुद्र पर बच्चे को घुमाकर लौटी तो घर के सामने दोनों बच्चियां बैठी धारो-धार रो रही थी, अन्दर दो-चार टूटे-फूटे बर्तन और थोडा-सा बेकार सामान पडा था। बेगम ने एहसान साहब के कपडे तक साथ ले लिये थे। उनके दोस्त मजहर के तो नहीं आ सकते थे, क्योंकि वह तो सांड-का-साड था और एहसान साहब मुनहनी-से आदमी थे पर वह उन्हें चोट देने के लिए सब कुछ ले गयी: अनाज का दाना भी न छोडा।

बडे आश्चर्य की बात थी कि एक सीधी-सादी घरेलू किस्म की औरत अपनी उम्र से छोटे जवान के साथ कैसे सब कुछ छोड़कर भाग गयी। पर मजहर इतना कम उम्र न था, जितना समय ने उसे बना रखा था। उसकी सफलता का एक गुर यह भी था कि वह हर आदमी को बडे भाई और साहब कहकर सम्बोधित करता था। सोलह बरस की उम्र में घर से भाग आया, बिगडे नवाब का बेटा था, मा-बहनों के जेवरों से ही बम्बई में कई साल गुजारा हो गया, अगर खुद उसकी जान को चमचे न लग गये होते तो शायद और कुछ दिन ऐश कर लेता। लेकिन इस ज़रा-सी उम्र में यार लोगों ने उसे वह चकफेरिया दी कि दीवाला निकल गया। कई साल तक इश्क-आशिकी से फुरसत न मिली—न जाने कितनी लतें लगी और छूटीं। जब होश आया तो खुद को एक बूढ़ी हिरोइन के नाज़-नख़रे उठाते पाया।

और फिर मजहर ने जिन्दगी से समझौता कर लिया। जब उस बूढ़ी हिरोइन ने उससे भी कमसिन छोकरे को घर का मालिक बना लिया तो वह उस गवरू के मनबहलावे के लिए कमसिन छोकरियां जुटाने लगा ताकि बुढ़ापे की कड़वी खुराक पर शकर मंढी जा सके।

फिर न जाने कहां से लुढ़कता-पढ़कता यह एक सरहदार प्रोड्यूसर का चमचा बन गया। उसे चमचेबाज़ी के सारे गुर आते थे, वह अनेक प्रोडेक्शंस में रहा, जिसके साथ काम करता बस उसी का हो रहता। धीरे-धीरे उसी के घर में सोने लगता और दो-दो, तीन-तीन बजे रात तक पार्टियों का इन्तज़ाम करने के बाद वह वहीं पड़कर ढेर हो जाता।

कौन-सा काम था, जो वो नहीं कर सकता था। वक्त-बेवक़्त अगर प्रोड्यूसर चिड़िया का दूध या भैंस का अंडा मांगता तो वह टैक्सी लेकर बम्बई का कोना-कोना छान मारता और भैंस के अंडे से भी ज्यादा अजीब चीज लेकर लौटता। जिसके घर में रहता, बिल्कुल रिश्तेदार बन जाता। एक तरफ़ वह अपने मालिक को औरतें सप्लाई करता, दूसरी तरफ उसकी बीवी के सीने में भड़कती हुई सवतिया डाह की जलन पर मरहम रखता। अगर बीवी को आपा कहता तो रखैल को फौरन भाभी बना लेता—इसलिए उससे सब खुश थे। दुनिया का कोई काम हो, वह फौरन कर देता, चाहे हाजी होटल से नान-कबाब लाने हों या नेवी मेस से व्हिस्की; पवन पुल से गाने वालों का इन्तज़ाम करना हो या मछली के शिकार की तैयारी; कच्चा फिल्म दरकार हो या स्टाक शाट्स, मजहर अवश्य ही सब प्रबंध कर देता।

जिस प्रोड्यूसर के साथ चिपक जाता उसे भगवान समझने लगता। पूरी इन्डस्ट्री में उसी की गाता फिरता। उसकी ऐसी पब्लिसिटि करता कि पैसे खर्च करने की फिर कोई जरूरत ही न होती। बस, जहा जाता, उसकी समझ-बूझ, प्रतिभा और कार्यकुशलता की कहानियां सुनाता फिरता—

वाह, साहब वाह, कमाल कर दिया साहब ने तो—यानी क्या शॉट लिया है कि साले कैमरामैन की रीढ़ की हड्डी टेढ़ी हो गयी।'''क्या पिक्चर बन रही है।—क़सम से, पुलिस के उतारे नहीं उतरेगी। क्या बनायेंगे ये आपके शान्ताराम और महबूब।"

उसके दोषों तक की तारीफ़ में शेखी बघारता।

यही कारण था कि जब एक प्रोड्यूसर का दीवाला निकल जाता तो वह उसे विरसे के तौर पर दूसरे प्रोड्यूसर के सिर चिपक जाता।

इसलिए एहसान साहब को मजहर पर इतना भरोसा था जितना अपने

पर भी नही था। उनकी अक़्ल काम नही करती थी कि इतनी पारसा बीवी और सच्चा दोस्त कैसे दगा दे गये। कई दिन तो बिल्कुल सन्नाटे मे पड़े रहे। उधर सुमन ने जब उनकी यह हालत देखी तो वह सवतिया डाह से जल मरी और एकदम रूठ गयी। रिट्ज होटल के बिल को रोती, गालिया देती मूलचन्द बजाज के खार वाले फ्लैट मे, जो दो महीने से ख़ाली पड़ा था, उठ आयी। मूलचन्द ने हाल ही में ओनरशिप के फ्लैट बनवा कर बडा माल कमाया था, फिल्म स्टारो का बड़ा दीवाना था। उसके ख्याल मे सुमन फुल स्टार थी। उन्ही दिनो एहसान साहब को पैरा-टाइफाइड ने दबोच लिया। फिल्म का हिसाब तो गडमड चलता ही है। ब्लैक की झूठी रसीदें भी अभी पूरी नही बनी थी। लेनदार टेंटुए पर सवार थे इसलिए वह अपनी पहली बीवी के पास लखीमपुर अ डरग्राउंड हो गये।

जी हा, ये फिल्म लाइन है। यहां हर पहली बीवी से और पहली बीवी होती है। यह ऐसी ही लाइन है। यहा इश्क, शादी व्यापार सब गूदड की पोटली की तरह है। फिल्मी आदमी को बार-बार शादिया रचाना पडती हैं, एक तो शादी होती है जो मा-बाप नयी उम्र में कर देते है, जिसमें भागकर वह फिल्म लाइन मे पनाह लेता है।

जब बीवी-बच्चे एक स्थाई मुसीबत बन जाते है, घर मे घुसना मुश्किल हो जाता है। अगर घर-जवाई हो तो सास-ससुर हर निवाले पर सौ जूतिया रखकर देने लगते है, जब सारी नौकरिया मिलने की उम्र गुजर जाती है, मिलने-जुलने वाले उसे कर्ज़ की बीमारी समझने लगते हैं।

तब उसे वे फिल्मी चमत्कार याद आते हैं, महबूब एक एक्स्ट्रा थे, आज फिल्म इंडस्ट्री के माई-बाप है। शांताराम स्टेज पर नाचा करते थे, अशोककुमार पचास रुपये महीने के असिस्टेंट थे, ये सब-के-सब कामयाब और बडे-बड़े लोग कुछ नही से, सब कुछ बन गये। और वह अपनी बीवी का बचा-खुचा ज़ेवर लेकर यार-दोस्तो से सूट मांगकर, सूटकेस और होलडाल उधार मांगकर बम्बई रवाना हो जाता है। बम्बई पहुंच कर वह कुछ दिन होटलो में रहता है। फिर जब हालत गिरने लगती है तो वह सामान किसी के घर मे डालकर खाना मुफ्तख़ोरों के साथ खाने लगता है। कपडे किसी के खाते मे धुलवाता है,

नाश्ता किसी के यहां कर लेता है और सोने को जहां भी रात को देर हो जाये, पड़ रहता है। सुबह-ही-सुबह किसी स्टुडियो में पहुंच जाता है। वहां हिरोइन या साइड-हिरोइन के साथ लग लेता है। कभी हीरो या विलेन के साथ चिपक जाता है। ये लोग भी बोरियत से बचने के लिए उसे झेल जाते हैं। फिल्म आर्टिस्टों का न कोई क्लब है न कोई तफरीह की जगह; न किसी चीज में दिलचस्पी लेने का वक्त। इस फिल्म के लोगों के साथ जो जरा मस्का लगाना जानते हों, उसका वक़्त कट जाता है। हर हीरो, शूटिंग के बाद घर पर ऐसे ही परकटे कबूतरों को घेरे दूसरे आर्टिस्टों की बुराइयां बखाना करते हैं। शराब का शुगल चलता है। उम्मीदवार को भी हलक तर करने को कुछ मिल जाता है। इसी तरह वह धीरे-धीरे उसका चमचा बन जाता है।

इस अर्से में वह वापस लौटने का वायदा करके, बीवी से और ज़ेवर बिकवाकर पैसा मंगा लेता है। हालत बहुत पतली होती है, जूते फट जाते हैं, कपड़े तार-तार होने लगते हैं तो वह कुछ दिन के लिए घर लौट भी जाता है। मगर इस अर्से में उसे बम्बई की हवा लग चुकी होती है और फिल्म लाइन का चस्का पड़ जाता है। घर वालों पर वह खूब अपनी दोस्तियों का रौब डालता है। हज़ारों और लाखों की बातें करता है और फिर इधर-उधर से पैसा बटोर कर बम्बई आ जाता है। अगर वह अच्छा मस्काबाज है तो बहुत जल्द किसी हीरो या हिरोइन के सहयोग से प्रोड्यूसर या डायरेक्टर बन जाता है। चौगुने सूद पर उधार, स्टुडियो और कच्चे फिल्म का इन्तजाम करके वह हीरो से दस दिन का, बिना पैसे लिये शूटिंग की भीख मांग लेता है। या तो स्वयं ही डाइरेक्टर-प्रोड्यूसर बन जाता है या अपने किसी कंगाल दोस्त से फिल्म ठुकवा लेता है। ज़ाहिर में वह और डाइरेक्टर स्वयं कुछ नहीं लेते, मगर जब फिल्म का बिज़नेस हो जाता है तब उसके खत्म होने तक ठाठ हो जाते हैं। वह तुरन्त नयी पतलूनें और नायलन की बुश-शर्टें बनवाता है। एक फ्लैट लेकर उसमें ही-आफ़िस खोल देता है। पत्रकारों को खिला-पिलाकर खूब पब्लिसिटि करवाता है। एकदम उसकी बड़ी पोज़ीशन हो जाती है। हीरो बनने के इच्छुक नौजवान, और लड़कियां अपनी मां या नानी के साथ उसको घेरे रहते हैं। सुबह से शाम तक हजारों मुफ्त काम करने वालों

का तांता लगा रहता है। कोई मुफ्त कहानी लिए चला आता है, कोई मुफ्त म्युजिक देने पर तुला हुआ है।

"आप फ़ला शायर को एक गाने के हज़ार रुपये देते है। मैं मुफ्त लिखने को तैयार हू। हिट हो जाये तो दे दीजियेगा।

"बस मैं तो स्क्रीन पर नाम, अपना देखना चाहता हूं। कहानी ले लीजिए, चाहे कुछ न दीजिए।"

मगर यहा भी काम से पहले नाम बेचना पडता है। इसलिए होशियार प्रोड्यूसर नाम किसी का बेचता है, काम किसी और से औने-पौने लेकर ठोक देता है, अब कौन उससे सिर मारता फिरे।

और इसी जमाने में उसे किसी एक्स्ट्रा असफल साइड-हिरोइन से इश्क हो जाता है। वह उसे अगली पिक्चर मे हिरोइन का चांस देने का झांसा देकर अपना उल्लू सीधा कर लेता है। यदि वह सहनशील और सीधी-सादी है तो उसे कुछ दिन और झेल लेता है। फिर कोई दूसरी हिरोइन बनाने लगता है। ज़ाहिर है कि जिसे वह गलती से हिरोइन बना दे वह झट नेक और पारसा बनकर अपनी अम्मा-अब्बा के संरक्षण मे रहकर लाखो कमाने लगती है। अगर उसकी फ़िल्म हिट न हुई तो उससे बिल्कुल नाता तोड़ लेती है। इसलिए जो जरा भी जानदार लडकी देखता है और पसन्द आ जाये तो उसे घेर-घार कर शादी कर लेता है। वह भी प्रोड्यूसर की पत्नी बनने मे ज्यादा शान महसूस करती है। कल तक सेट पर दुत्कारी जाती थी, आज बेगम साहब कहलाती है, बात-बे-बात हर एक पर रोब जमाती है। पीठ पीछे लोग उसे भयानक गालियां देते हैं, मुह पर सलाम झाडते हैं।

एहसान साहब की बेगम भी किसी ज़माने में रंजीत मे स्थाई साइड-हिरोइन थी। आमतौर पर कामेडियन के साथ धौल-धप्पो के सीन मे रोल किया करती थी—लेकिन अब लोग उन्हे भूल-भाल चुके थे। वह भी बाल-बच्चो में घिरी हुई बिल्कुल मैली-कुचैली गृहस्थिन बन गयी थी पर एहसान साहब की आये दिन की इश्क बाजियो से उकताकर कभी-कभी वह भी किसी मे दिलचस्पी ले लिया करती थी। मज़हर से कई साल से मेल-जोल बढ रहा था, उसे मालूम था कि वह बीवी पर पूरा-पूरा भरोसा करते हैं, सब हिसाब-

किताब उसी के हाथ में था। अब, सुमन का किस्सा जब से चला था, बेगम खार खाये बैठी थी। पहली फुरसत में कूड़ा-कर्कट एहसान साहब के सिर पटक वह झाड़ू देकर चलती बनीं।

और एहसान मियां कुछ न कर सके। क्योंकि सारा रुपया चोरी का था और बेगम उनकी फिल्मी बीवी थी। निकाह करने की कभी ज़रूरत ही नहीं महसूस हुई। इस बुरे दिन की किसे उम्मीद थी।

उनके जाने की बेगम को बड़ी खुशी हुई, पाप कटा! कमबख्त बहुत ही इतराती थी। जैसे नीलोफ़र बेसवा है और वह मालजादी क्या नाक चढ़ा कर बात करती थी। दूसरे एहसान मिया का कमीशन भी चलता था। और अब, उन्हें चूंकि उनकी मदद की ज़रूरत नहीं थी इसलिए काटे की तरह खटकते थे। वह अहमद भाई से सीधा चुपचाप सौदा कर लेना चाहती थी, कई बार उन्होंने बेरुखी बरती, पर एहसान साहब एक ढीठ थे, खीसें काढ़े हंसा करते और पैसा लिये बिना न टलते।

उन्होंने एहसान मिया की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर अहमद भाई के कान भरने शुरू किये, उठते-बैठते रोना रोती, हर बात का हिसाब करती। सारी बेईमानियों के पोल खोल दिये।

कितनी बदल गयी थी इन चन्द बरसों में बेगम, उनकी बातों में बाज़ारी रंग झलकने लगा था। अगर कोई औरत अहमद भाई की तरफ नज़र भरके भी देख लेती तो वे जलकर मुरंडा हो जाती, वे खुली-खुली गालियां सुनातीं सुनने वाले को घिन आ जाती।

नीलोफ़र को अहमद भाई से वैसे भी चिढ़ थी, इन बातों का बहाना लेकर वह बिल्कुल ही उनका कचूमर निकाल देती। बात-बात पर मुंह भरके गधा, पाजी, हरामी पिल्ला कह देती। अब तो वह कभी-कभी जूती उठाकर मारने से भी न चूकती।

"ऐ हैं बदबख्त! रोज़ी को जूता मारती है।" वह सहम कर कहती। उनकी समझ में अहमद भाई आटे की उस बोरी की तरह थे, जिसका मुंह बराबर खुला रहता था। माहवार तन्ख़ाह के अलावा रोज़ ही कुछ-न-कुछ लेकर आते, नीलोफ़र नज़र उठाकर भी न देखती तो बेचारे उदास हो जाते।

"क्या बेबी कभी भी खुश नहीं होना।" यह उसे फिल्मी बेबियों की तरह बेबी कहते थे। कुछ भाव ऊंचा लगने लगता था।

"अरे बनती है अहमद भाई।"'मुह पर जाहिर नहीं करती। आपसे छेड़ मे उसे मजा आता है।" बेगम मंझी हुई नायिका की तरह कहती। पेशे के साथ-साथ गुर कुदरत ने आवश्यकतानुसार अपने आप सिखा दिये। बेगम पर खूब बोटी चढ़ रही थी, रंग निखर गया था, मेकअप भी टक्कर करने लगी थी। पहले तो बालो मे कभी मेहदी लगा लिया करती थी, पर जिस दिन से बेबी के परमानेन्ट सेट कराने हेयर ड्रेसर के यहा गयी, उसने राय दी तो खिजाब लगवाने लगी। बाल काफी छिदरे हो गये थे, मगर पहले से जवान लगती थी। छटे ठस्से के ब्लाउज सिलवाती, निहायत नुकीले चोली-कट के, बुरी तरह फसे हुए कि मास के बोटे उबल पड़ते, भरे हुए सुडौल हाथ अगूठी-छल्लो से लदे हुए। जब वह हैदराबादी चादी की पिटारी सामने रख गिलौरिया बनाती तो बस सारगी की गुनगुनाहट और तबले की थाप की कसर रह जाती थी।

सलीम को उन्होने पचगनी सेट पीटर मे भरती करवा दिया था। लड़कियो को भी दस सात कान्वेंज मे छोड़ आयी। घर का वातावरण छोटे बच्चो के लिए उपयुक्त न था। नीलोफर और अहमद भाई का इश्क बिल्कुल बिल्लियो जैसा चीखता-चिघाड़ता हुआ लगता था। बच्चो के दिलो मे खुदबुद हुआ करती। दरवाजे फुहड़िया चौपट खुले छोड़ देती थी। नशे मे चूर एक दिन अहमद भाई ने न जाने क्या हरकत की कि बरामदे मे बैठी हुई हलीमा की घिग्घी बध गई, रोती हुई आकर वह मा से चिपट गयी। अहमद भाई कुछ यो ही-सी तौलिया लपेटे अपनी सफाई पेश करने चढ़े चले आये। हाथ चला-चलाकर कहने लगे—"एकदम बदमाश छोकरी है, प्राइवेट रूम मे काए को झाका ?'''हम कुछ नहीं कहा। इतना बोला, बाबा इधर हम बात करता है, अगासी मे जाकर खेल।'''ऊपर से बोलती है हम इसका छाती नोचा। '''क्या बाबा'''हम काए को नोचता'''क्या हम मवाली है ? बोलो।"

बड़ी मुश्किल से समझा-बुझाकर टाला। और नीलोफर को देखो, बेहया खी-खी हंसती रही, जैसे कुछ बात ही न हो। जुबैदा अब काफी होशियार हो

गयी थी, वह खूब समझती थी कि अहमद भाई का नीलोफर से क्या रिश्ता है। एहसान साहब भी उसपर जरूरत से ज्यादा मेहरबान रहते थे। बात-बे-बात गोद में घसीट कर दबोचते।

"अरे क्या स्कूल में वक्त बरबाद करती है, इसे नाच सिखवाओ, लच्छू महाराज से मेरे बड़े अच्छे मरासिम हैं!" वह राय देते और बेगम का खून खौल उठता। एक बेंट तो उन्होंने चढ़ा दी, मगर खानदानी बनने का प्रोग्राम उन्हें बड़ा घिनावना लगता। नीलोफर वैसे बड़ी बेपरवाह थी, पर भाई या बहन पढ़ने में सुस्ती करते तो उन्हें खूब चार चोट की मार देती। कभी उनकी किताबें हाथ आ जातीं तो बड़े प्यार से उन्हें उलट-पलटकर देखती, जैसे उनके पन्नों में अपना वह खोया हुआ जमाना ढूंढ रही हो, जब वह स्कूल जाती थी।…उफ, क्या दिन थे वे भी! क्या सिर जोड़कर सहेलियों में बातें हुआ करती थीं। जिन्दगी की बातें, प्यार और छेड़-छाड़ की बातें…कुआंरे सपनों की धड़कती हुई बातें, जिसमें उबटन की खुशबू थी, मेंहदी का रचाव था और सुहागपुड़े की महक थी, फिर वह उन सुरचप गूंगी शहनाइयों के सुरों में खो जाती, जो अब कभी नहीं बजेंगी। अचानक वह चौंक पड़ती, अहमद भाई के गाल में नसड़े हुए होंठ उसकी कमज़ोर कुंआरी हस्ती को भंभोड़ डालते और वह बड़ी बेदर्दी से जो चीज़ हाथ आ जाती, खींच मारती।

एहसान साहब ससुराल से लौट आये थे। अहमद भाई से अब उनकी कुट्टी हो गयी थी क्योंकि अहमद भाई बम्बई की भाषा में कड़के हो चुके थे। आधी बनी फिल्म के वर्ल्ड राइट्स जिसके पास थे उसने आफिस पर कब्जा कर लिया। हर तरफ अहमद भाई हुंडी दे चुके थे। उधर डिस्ट्रीब्यूटर फिल्म की डिलीवरी का तकाजा कर रहे थे, मगनलाल ड्रेसवाला ने अलग दावा ठोक दिया, फर्नीचर वाले ने नोटिस दे दिया, एक-के-बाद-एक फ्लाप फिल्म बनाये, बाल-बाल कर्ज़ में बंध गया।

कितना समझाया हरामजादी नीलोफर को कि जेवर ले, यह कूड़े-कर्कट में पैसा मत बरबाद कर, पर उसे तो जैसे जिद थी काली, पीली गन्दे रंगों की साड़ियों के अलावा कभी जो किसी चीज में दिलचस्पी ले जाये। और साड़ियां भी वह पहनती कब थी? बस एक मैला-सा हाउस-कोट पहने घूमा

करती थी, लाख समझाग्रो पर कभी बन-ठन कर तैयार न हुई। फलस्वरूप जब फ्लैट पर भी टाच ग्रा गई तो हवास गुम हो गये।

उस बुरे वक्त मे, हैरत है कि काम ग्राये तो एहसान साहब, जैसे ही सुना झट सूरजमल को लेकर भागे ग्राये, उसी वक्त फ्लैट खरीद कर कागज़ बेगम के कदमो मे डाल दिया। फिर सबको उनकी मोटर मे भरकर 'गेलार्ड' मे खाना खिलाने ले गये।

ग्रहमद भाई बहुत रोये चिल्लाये, सूरजमल मुस्कुरा कर उठे ग्रौर चल दिये। बेगम रोकती रह गयी पर वह न रुके, चलते-चलते कह गये—"ग्राप इनसे निपट लीजिये, मैं शाम को ग्राऊंगा।"

ग्रहमद भाई ने बडा उधम मचाया। सूरजमल को गोली मारने की धमकी दी।

"ऐ है, दीवाना हो गया है कमबख्त। वह तो दो घडी को ग्राया ग्रौर चला गया। खुदा कसम क्या शरीफ ग्रादमी है, बेबी की तरफ बुरी निगाह भी न डाली, हाथ पकडना तो बडी बात है।"

"पण साला तुम कितना बेईमान है, हम जरा बीमार पडा ग्रौर तुम उधर दूसरा सेठ चालू कर दिया···पक्का चोर है तुम लोग।"

"ऐ तो क्या सड़क पर जा पडते। उस बेचारे ने बुरे वक़्त मे सहारा दिया। वरना तुम तो वही ग्रपनी जोरू के कलेजे मे घुसे बैठे रहते, हम यहा वीरान हो जाते तो तुम्हारी बला मे।"

"क्या बकवास करता तुम···हम साला जोरु के पास कब घुसा।···हम ग्रपना सामान लेने को गया।···हम उसको तलाक दे देवे तुम बोलो तो··· बस ग्राज ही निकाह हो जावे, साला खिटपिट खतम होवे।

"निकाह ?" बेगम ने ठहाका लगाया—"सेठ, जब वक़्त था ग्रौर हमने तुम्हारी जूती पर निकाह के वास्ते नाक रगडी थी तो क्या टका-सा जवाब दे दिया था—निकाह का लफडा नही मागता।...हुंह···है है, बच्ची को बचा लिया ग्रल्लाह ने, वरना मैं कमबख्त तो खुद ही चूल्हे मे झोकने को तैयार थी।"

"पण ग्रब हम बोलता ना···निकाह भी करेगा—हा, ग्रौर क्या।"

"तो नीलोफर से पूछ लो।···वह राज़ी हो तो मेरी बला से।" बेगम

जानती थीं नीलोफ़र क्या जवाब देगी। चिढ़ाने को बनकर बोली—"वह मुख्तार है अपनी।"

"ना बाबा। उसका मस्तक फिरेला है।"'हम तुमको बोलता।"

"हमको क्या बोलता।" मुंह चिढ़ाकर बोली।

"तुम उसका गार्जियन है न।"

"उई, मैं क्यों होती गार्जियन फार्जियन। अल्लाह रक्खे, नहीं नहीं अब वह अपनी मरज़ी की मुख्तार है, उसका जो जी चाहे करे। एक छोड़ दस निकाह करे, मेरी जूती से'''खानदान की रही-सही नाक का भी सफाया कर दे।"

"वह तो साला एकदम हलकट है। तुम उसको बोलो ना।" अहमद भाई इठलाये।

"मैं कुछ नहीं जानती, कमरे में बैठी है, बात कर लो जाकर।"

डरते-डरते अहमद भाई कमरे में गये। नीलोफर मर्जेन्टा रंग का अतलस का हाउस-कोट पहने फर्श पर पड़ी थी, उसकी एक रान खुली थी। आज अहमद भाई ने दरवाजा बन्द कर लिया।

"बेबी!" वे डरते-डरते बोले। सफेद हाथी-दांत जैसी पिंडली पर सुनहरे रोएं जगमगा रहे थे, जैसे किसी कुशल सुनार ने कुन्दन जड़ दिया हो।

"बेबी डार्लिंग!" अहमद भाई घिघियाये।

"क्या है?" उसने मैगज़ीन के पीछे से जवाब दिया।

"कैसा है तुम?"

"अच्छा है हम'''काये को?" नीलोफर अहमद भाई की संगत में बड़े लटके से वैसे ही बोलने लगी थी।

"तुम नाराज है क्या हमसे?"

"काये को?" उसने फिर उनकी नक़ल उतारी।

"फिर तुम हमारे को किस्सी नहीं दिया ना।"

"किस्सी मांगता?'''लेओ किस्सी!" उसने अपने गोल-गोल होंठ फुलाकर ठोडी आगे बढ़ा दी। मगर जब अहमद भाई उसपर झुके तो वह लोट लगाती दूर चली गयी। झोंके में औंधे हो गये बेचारे। डाक्टर ने सावधान रहने का हुक्म दिया था।

जब वे हलकान पसीने से तर कांपती टांगों से सिर झुकाये नीचे उतर रहे थे तो नीलोफर के ठहाके उनके पीछे तालियां बजाते दौड़ने लगे।

"ऐ क्या हुआ ?" बेगम ने पूछा—"क्यों चले गये इतनी जल्दी ?"

"फ्यूज उड़ गया।" नीलोफर ने ठहाका लगाया।

बेगम की समझ में कुछ न आया। नीलोफर पागलों की तरह ऊंचे-ऊंचे ठहाके लगा रही थी, मारे हंसी के पेट में बल पड़ रहे थे, आंखों से पानी बह रहा था।

"दीवानी हुई है कमबख्त !" उन्होंने बच्चों को बाहर ढकेलकर उसके बदन पर चादर डाल दी। मगर जब नीलोफर ने हंसी से लोट-पोट होकर तफसील बतायी तो बेगम भी मुस्कराहट न रोक सकीं।

"ऐ है, बड़ी जालिम है तू।" वे बोलीं।

"वाह, हम क्या करते ?" नीलोफर इठलाई और लातों से चादर दूर फेंक दी। "उफ क्या गर्मी है !"

नीलोफर को बेगम ने जन्म दिया था। अभी चन्द साल पहले तक कभी-कभी अपने हाथों से नहला भी दिया करती थीं। पर उस समय उसकी नंगी जवानी को मसनदों बिस्तर पर नग्नता देखकर थर्रा उठी, जैसे खुद उन्हें ले जाकर किसी ने चौराहे पर नंगा कर दिया हो। किस्मत ने धक्के जरूर दिये थे पर उनमें अब भी शर्म-हया मौजूद थी। एहसान साहब तो फिर गैर थे, उन्होंने नवाब साहब के सामने जवानी के दिनों में भी कमरे में कभी बिजली न जलने दी, और नीलोफर का धधा तो था ही अंधेरे का। यों सौ कैंडिल पावर बल्ब के नीचे उसका दहकता हुआ पिंडा उन्हें जलाकर राख बना रहा था।

"उठ बेहया। क्या मछली की तरह पड़ी ऐंठ रही है।"

"ऊं, हमें गर्मी जो लगती है।" वह और पसर गयी।

दरवाजा बन्द करके बेगम लौट आयीं और सलीम के एक धौल जड़ी, जो खिड़की से से झांकने की कोशिश कर रहा था। वह पन्द्रह दिन से आया हुआ था और वापस जाने के खयाल से उदास हो रहा था।

□

अंधेरा उजाला

कभी अंधेरा, कभी उजाला

"बत्ती जलाओ-बत्ती बुझाओ"

"लाइट्स ऑन लाइट्स ऑफ"

"नंबर चौबीस."

"नंबर सत्तरह."

"मिस शकुंतला को एक बेबी और दो."

"चौदह नंबर ऊपर लो."

"सत्ताइस नंबर को हार्ड करो."

"हार्ड, और हार्ड बस-बस साफ्ट करो, और साफ्ट, बस."

"नंबर अठारह में कपड़े का डेफ्युजर डालो नहीं-नहीं शीशे का डेफ्युजर."

"रिहर्सल."

"कैमरा रेडी फॉर रिहर्सल ?"

"यस रेडी, ओ. के."

"आल लाइट्स."

अंधेरे के समुदर में रोशनिया एक ही वक्त में लपक कर बाहर आयी और रात का दिन बन गया-न सिर्फ सेट की तीन दीवारें (बगैर छत की) बल्कि स्टूडियो का कोना-कोना जगमगा उठा.

"रिहर्सल."

साउंडर्द्क की सीटी—"खामोश! खामोश!!"

डाइरेक्टर की आवाज—"यस, मिस शकुंतला! रेडी दीपकुमार ?"

"तो, तुम सचमुच मुझे जीवन साथी बनाने के लिए तैयार हो, राधा ?"

"ये भी पूछने की बात है सुदर?"

"हा, राधा, मैं जीवन के जिस रास्ते पर चल रहा हूं वह बड़ा कठिन और भयानक है. इस खारदार जिंदगी में कदम-कदम पर काटे हैं—क्या इस रास्ते पर तुम मेरे साथ चलने को तैयार हो?"

"हा सुदर, तुम्हारे साथ चलूंगी तो रास्ते के कांटे भी फूल बन जायेंगे"

"राधा!"

"सुदर!"

"हाऊ इज दैट?"

साउंडट्रैक से दो सीटियां.

"ओ. के. लाइट्स आफ."

"ओ. के. लाइट्स आफ."

"ओ. के. फार टेक."

"मेकअप."

"मिस शकुतला की लिपस्टिक ठीक करो."

"दीपकुमार की नाक चमक रही है."

"रेडी फॉर टेक."

"ओ. के."

"फोकस."

"पाच फिट साढे ग्यारह इंच."

"लेंस बदलो, सेवेंटी फाइव लगाओ."

"साउंड रेडी?"

"खामोश, खामोश! वी आर शूटिंग!"

"आल लाइट्स!"

"बत्ती जलाओ."

"बत्ती बुझाओ."

स्टूडियो के फर्श से चालीस फिट की ऊंचाई पर लोहे के गार्डरों के ए खाचे में एक फिट भर चौड़े लकड़ी के तख्ते के सहारे लटका हुआ, एक हा

से मन भर वजनी लाइट को संभाले हुये और दूसरे हाथ से रस्सी को मज-बूती से पकड़े कुंदनकुमार सोच रहा था कि क्या उसकी किस्मत मे कभी दीपकुमार की तरह लाखों रुपये पाने वाला हीरो बनना न होगा—क्या उसके 'सुहाने सपने.' 'अधूरे ख्वाब' बनकर ही रह जायेंगे? (उसे फिल्मी जबान में न सिर्फ बोलने बल्कि सोचने की भी आदत पड़ गई थी) क्या वह हमेशा चालीस रुपये रोजाना पर लाइट कुली का काम ही करता रहेगा?

कुंदनकुमार!

ये उसका पैदाइशी नाम नहीं था. उसके बाप ने तो नुक्कड़वाले ज्योतिषी जी की सलाह से उसका नाम सूरजमल रखा था.

कुंदनकुमार!

ये नाम तो अपने लिए उसने खुद तजवीज किया था ऐसे ही नही, सोच-विचार के बाद हिंदुस्तान के दो मशहूर फिल्मी सितारो यानी कुंदनलाल सहगल और अशोककुमार के नामो का मिश्रण कि शायद इस नाम की बरकत ही से उसकी किस्मत चमक उठे.

कितने साल से हीरो बनने की ख्वाइश उसके सीने मे सुलग रही थी. वह छह या शायद सात साल का था और पाठशाला मे दाखिल हुआ ही था कि उसके कस्बा करनाल मे पहली बार एक शूटिंग सिनेमा आया अब तो उसे फिल्म का नाम भी याद न था. ऐडीपोली की कोई मारधाड़, मुक्केबाजी और सस्पेंस के वाकयात से लबरेज फिल्म थी. हालीवुड से चलकर न जाने कहां-कहा होता हुआ शायद दस-बारह बरस मे करनाल पहुचा था. 'टाकी' सिनेमा आ चुका था, मगर ये फिल्म खामोश ही थी और क्योकि 'सब टाइटिल' अंग्रेजी मे लिखे हुए थे इसलिए एक आदमी साथ-साथ समझाता जाता था. बा-आवाज बुलद—"देखो-देखो सफेद घोड़े पर सवार ये ऐडीपोलो चला आ रहा है...अब यह अकेला सब डाकुओ का मुकाबला करेगा...शाबाश, शाबाश बहादुर शाबाश, मार साले को. एक और दे...वह मारा!...और जब पर्दे पर एक फूले-फूले गालो वाली मेम का बडा-सा चेहरा नजर आया, उस वक्त उसने जोश मे आकर कहना शुरू किया—"देखो-देखो क्या मजेदार लौंडिया

है—पटाखा है पटाखा।"

उस वक्त कुंदनकुमार (बल्कि कहना चाहिये सूरजमल) को ये भी नही मालूम था कि कोई लौडिया 'पटाखा' कैसे हो सकती है? और मजेदार तो कोई खाने की चीज ही हो सकती है— जैसे कल्लू हलवाई की बनी हुई गुलाबजामुन या कुलफी वाले के हंडे में से निकली हुई मलाई की बर्फ, या नवाबसाहब के बाग में से चुराये हुये खट्टे-मीठे चूसने के आम. फिर उसने देखा कि ऐडीपोलो उस लड़की के डबलरोटी जैसे फूले गालों को चख रहा है. और शायद उसे भी ये लड़की 'मजेदार' ही लगी होगी कि फौरन ही उसने उसके होंठों को चूसना शुरू कर दिया. बिलकुल ऐसे ही जैसे बरसात में जर्द-जर्द आमों को चूसते है!

य तो शहर के सब बच्चे ही सिनेमा देखकर पढ़ाई लिखाई, खेलकूद सब भूल गये. मगर सूरजमल तो इस नये तमाशे पर बिल्कुल ही मर मिटा. सात दिन, जब तक सिनेमा करनाल मे रहा, वह रोजाना किसी न किसी बहाने से वहां जाता रहा. क्या जादू भरा तमाशा था, रोज नये खेल. कभी घोडे दौड रहे है, कभी लड़के और पिस्तौल चल रहे है, कभी साहब और मेमे नाच रही है, कभी डाकू चलती रेल की छत पर चढे हुए एक-दूसरे से घूसा बाजी कर रहे है कभी एक नाटा सा, दुबला सा, छोटी-छोटी मूछों वाला, जोकर टेढी-मेढी टांगों से चल कर हंसा रहा है—अजीब हरकत, अजीब सनसनी. अजीब जादू था उस तमाशे में;

फिर सिनेमा अपना तंबू और मशीन उठाकर किसी और शहर रवाना हो गया पाठशाला मे पढाई फिर शुरू हो गयी. बच्चो ने फिर गुल्ली-डंडे, कबड्डी और गोलियों मे दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी. रामलीला के नाटकों की तैयारियां शुरू हो गयी मगर सूरज के नन्हे दिमाग पर सिनेमा का जादू छाया रहा— "काश! मैं भी एक्टर बन जाऊं" वह सोचता— "और फिर एक सफेद घोडे पर चढ़ कर डाकुओं का मुकाबला करूं, चलती रेल से दरिया में छलांग लगाऊं, साहिबों, मेमों की तरह नाचूं...और...और अगर कभी कोई फूले-फूले गालों वाली लौंडिया मिल जाये तो उसको चख कर देखूं कि वह स्वाद में कल्लू हलवाई की गुलाबजामुन की तरह मीठी है या कच्ची नाशपातियों की तरह खट्टी!..."

"लाइट्स ग्राफ"

ग्रौर बगैर अपने खयालात के बहाव को रोके कुदन ने बटन दबा कर अपनी लाइट को बुझा दिया. उसे इस लाइट और इस काम से भी लगाव था—इसलिए नहीं कि वह हमेशा 'बत्ती बुझाग्रो...बत्ती जलाग्रो' के हुक्म सुनने वाला लाइट कुली ही रहना चाहता था एक न एक दिन तो उसे हीरो बनना था और वह जरूर हीरो बनकर रहेगा मगर फिलहाल ये क्या कम था वह एक स्टूडियो मे ग्रा-जा सकता था बडे-बडे मशहूर फिल्मी सितारो को करीब से देख सकता था, चिपका बैठा एक्टिंग और फिल्म मेकिंग की बारीकियो के गुण सीख सकता था और फिर इस काम मे दिमाग पर जोर डालना ही नही पडता—"बत्ती जलाग्रो" बटन दबा दिया—"बत्ती बुझाग्रो" बटन दबा दिया—हार्ड करो"—एक फिरकी को सीधी तरफ घुमा दिया—"साफ्ट करो"—फिरकी को उलटी तरफ घुमा दिया...और इस तमाम अरसे मे जो चाहो सोचो...वह दस या ग्यारह बरस का था और म्युनिसिपल बोर्ड स्कूल के चौथे दर्जे मे पढता था. जब टिन की छत और कच्ची दीवारो का एक मुस्तकिल सिनेमा करनाल मे बन गया और सूरज को बाकायदा फिल्म देखने का मौका ग्राखिर नसीब हो ही गया हफ्ते मे कम से कम एक बार वह सिनेमा जरूर जाता और फिल्म अच्छी होती या बुरी उसके शौक के जज्बात को तसल्ली हो जाती, बल्कि हर फिल्म उसके बढते हुये दिमाग पर नये-नये नक्श छोड जाती.

कई बरस तक सिनेमा का जादू उस पर असर करता रहा—वह जानता था कि इस रुपहले पर्दे की चलती-फिरती तस्वीरो मे एक अजीब कशिश है मगर अभी तक इन सायो मे तमीज करने की सूझबूझ नही पैदा हुई थी वह किसी खास किस्म की फिल्म, किसी खास कपनी की फिल्म, किसी खास स्टार की फिल्म देखने नही जाता था. वह सिर्फ फिल्म देखने जाता था' कैसी भी हो, किसी की भी हो—"जो कुछ मिले, जहा भी मिले, जिस कदर मिले."

मगर ज्यो-ज्यो उसकी उम्र बढती गयी और उसका शौक तेजतर होता गया, सिनेमा की कशिश एक बेनाम जज्बे की हद मे निकल कर खास और मालूम शक्लें अख्तियार करती गयी.

गौहर का गुदार जिस्म.

मास्टर विट्ठल की फुर्ती और उसका कसरती बदन.

सुलोचना की गोरी रंगत, चमकीले स्याह बाल और बड़ी-बड़ी आखें.

बिलीमोरिया की बारीक और नुकीली मोछें.

माधुरी की तेजी और चुलबुलापन.

चार्ली, गौरी, दीक्षित की धमाचौकड़ी, जिसको देखकर पेट में हसी के मारे बल पड जाते थे.

खूबसूरत आंखों वाली जुबैदा—"उफ तेरी काफिर जवानी जोश पर आयी हुई!"

और फिर हिंदुस्तानी फिल्म बोल पड़ी और 'जन्नत निगाह' अब 'फिरदौसगोस' भी बन गयी न सिर्फ आख के रास्ते बल्कि कान के रास्ते भी ये चलती-फिरती तस्वीरें दिलो मे घर करने लगी.

उफ कज्जन की आवाज.

मास्टर निसार की सुरीली तानें.

आगा हश्र के लिखे हुए रोबदार डॉयलाग. और फिर सहगल—जादू भरी आवाज वाला सहगल

और जुबैदा का वह एक अनोखे अ दाज से तुतला-तुतला कर बोलना...

सूरज ने किसी न किसी तरह मिडिल पास कर लिया. उसका बाप जो पसारी की दुकान करता था, चाहता था कि अब बेटा पढाई छोडकर उसका हाथ बटाये. मगर सूरज का दिल सिनेमा की रूमानी रंगीनियो से आशना हो चुका था. उसको कब गवारा था कि अपनी जिंदगी सौफ, कालीमिर्च, हल्दी और नमक की पुड़िया बाधने में गुजार दे! एक बार स्कूल छूट गया और दुकान पर बैठने का सिलसिला बन गया तो फिर सिनेमा देखने की फुर्सत भी कब मिलने वाली थी! हालांकि उसका दिल पढाई मे भी नही लगता था, मगर उसने यही बेहतर समझा कि बाप को समझा-बुझा कर दो साल और हाईस्कूल मे गुजारने की मोहलत हासिल कर ले और इस अरसे मे कोई ऐसी तरकीब निकाले जिससे वह बबई की फिल्मी दुनिया मे कदम रख सके.

अब उसकी उम्र सत्तरह बरस के लगभग थी. खाला खिलता हुआ रंग और नाक नक्शा बुरा नहीं. कद साढ़े पांच फुट से कुछ ज्यादा ही, लंबे बाल जो बड़ी मेहनत से घूंघरवाले बनाये गये थे. हर बार जब वह आइना देखता, उसको यकीन हो जाता कि एक बार कोई डाइरेक्टर उसको देख ले तो फिर स्टूडियो के दरवाजे उसके लिये खुल जायेंगे.

इस साल रामलीला का मेला लगा तो उसमें दिल्ली के एक फोटोग्राफर ने एक दुकान जमाई—'एक रुपये में आठ फोटू' और मजा ये कि पांच मिनट में तैयार. सूरज सबसे पहले पहुंचा, बाप से छुपाकर एक टाई—'हम माल मिलेगा साढ़े नौ आने में' ली थी, वह कालरदार कमीज में लगायी, ऊपर वही स्कूल वाला कोट, नया धुला और इस्त्री किया हुआ. फोटू में तो सिर्फ गर्दन से जरा नीचे तक आने वाला था. मालूम होगा सूट पहने है. फोटू खिचने शुरू हुये. सूरज ने फिल्मी रिसालों में ऐक्टरों की तस्वीरों का खासा अध्ययन किया था—वही 'पोज' देने शुरू किये—'फ्रंट व्यू', 'प्रोफाइल', 'थ्री फोर्थ', फोटोग्राफर ने दो चार किस्म की टोपियां रखी थीं—उनमें से एक 'नाइट कैप' सर पर जमा कर एक फोटू अमेरिकन एक्टरों की तरह का—फिर टोपी, टाई और कोट उतार डाला. कमीज का कालर ऊपर चढ़ गया. बाल बिखर गये—आंखों में हसरत और इश्क का जुनून—ये हुआ 'नाकाम आशिक'. फिर बाल बिखर गये और आंखें ऊपर चढ़ गयीं. फोटोग्राफर ने बियर की खाली बोतल में कागज के फूल रख छोड़े थे. लपक कर उसे उठा लिया तो ये हुआ 'आंख का नशा'. अब एक फोटू रह गया. उसमें क्या किया जाये? फोटूग्राफर ने शायद एक्टर बनने के ख्वाइशमंद नौजवानों के फोटू लेने ही में महारत हासिल की थी. उसने फौरन बनी-बनाई दाढ़ी मूछ पेश की. सूरज ने ऐनक जैसी कमानियों को कान में अटका कर दाढ़ी 'पहन' ली और बगैर मेकअप के अपने चेहरे पर बुढ़ापे के भाव लाने की कोशिश की. ये हुआ 'यहूदी की लड़की' का 'बूढ़ा बाप' या 'बदनसीब कैदी'—ताकि डाइरेक्टरों और प्रोड्यूसरों को यकीन हो जाये कि वह कैरेक्टर एक्टिंग के मैदान में भी अपने जौहर दिखा सकता है.

उस रात को कुंदनकुमार ने जन्म लिया, जब वह फिल्म कंपनियों के नाम खत लिखने बैठा तो अचानक उसे खयाल आया कि सूरजमल एक निहायत

गैररूमानी और बनिया किस्म का नाम है. इस नाम के लडके को कोई हीरो नहीं बनायेगा फिर कौन सा नाम अख्तियार किया जाय? जब से कुमार ने 'पूरन भगत' मे नाम पैदा किया था 'कुमार' तो एक्टर के नाम का एक लाजिमी हिस्सा हो गया था. अशोककुमार, सुनीलकुमार, दिलीपकुमार, ये कुमार वो कुमार, और फिर इनमे से किसी का असली नाम भी तो कुमार नही था यहा तक कि अशोककुमार का असली नाम गागुली था—और खुद कुमार का नाम मीर अली, तो फिर सूरजमल भी क्यो न सहगल से उसके नाम का पहला हिस्सा माग कर कुदनकुमार बन जाये?...लिहाजा खत और फोटू फिल्म कम्पनियों के नाम रवाना कर दिये गये और ख्वाब मे एक के बाद एक क्रेडिट टाइटिल नजर आते रहे—

बाबे टाकीज प्रेजेंट्स—

कुदनकुमार

इन

'सपूत'

बाबे टाकीज प्रेजेंट्स...

न्यू थियेटर प्रेजेंट्स...

प्रभात फिल्म कपनी प्रेजेंट्स...

मिनर्वा मूवीटोन प्रेजेंट्स...

रंजीत फिल्म कपनी प्रेजेंट्स...

और फिर बैकग्राउड म्यूजिक की झकार के साथ एक पर्दे पर नाम चमकता हुआ...

कुदनकुमार!

कुदनकुमार!!

कुदनकुमार!!!

कुदनकुमार!!!!

"अबे ओ कुदन! सोता है क्या? नंबर सत्ताइस आफ."

एक लमहे के लिए लाइट कुली, कुदन, फिल्म स्टार कुदनकुमार के सपनों मे खो गया था. असिस्टेंट कैमरामैन की पुकार पर वह हड़बड़ा उठा—शॉट

खत्म हो गया था, और सब रोशनियां बुझ गयी थी. सिर्फ कुंदन की नंबर सत्ताइस की रोशनी एक पीले दायरे में मिस शकुंतला पर पड़ रही थी जिसने अभी-अभी फिल्म के आखिरी शॉट के डायलॉग बोले थे. चालिस फुट नीचे सेट की हर चीज—दीवारें जो लकड़ी के टेकों के सहारे खड़ी थी, स्टैंड पर लगी हुई लाइट्स, कैमरा, उसके पीछे रखी हुई कुर्सियां, खिलौना मालूम होती थी और हर शख्स गुड़िया मालूम होता था—मिस शकुंतला, दीपकुमार, डाइरेक्टर बासु जो अभी तक तय न कर पाया था कि शॉट को ओ. के. कहे या 'एन. जी.' और, बराबर बड़बड़ाये जा रहा था—"ठीक था...ठीक था...मगर ये पिक्चर का लास्ट शॉट है, अपने को कुछ और मांगता, कोई पिक्टोरियल इफेक्ट..." और फिर उसने न जाने क्या देखा या सोचा और अपनी खास जोशीली आवाज मे चिल्ला उठा—

"आई गेट इट, दिस इज व्हॉट आई वांट!"

और उसी वक्त कुंदन ने अपनी लाइट को बुझा दिया—एक लमहे के लिए उसे टिमटिमाती हुई 'हाउस लाइट' में सेट की कोई चीज नजर न आयी —मगर डाइरेक्टर बासु की आवाज सुनाई दी—

"इडियट! वही लाइट तो अपने को मांगता..."

और फिर असिस्टैंट कैमरामैन की दहाड़ती हुई आवाज—

"नंबर सत्ताइस ऑन करो"

"बत्ती बुझाओ!"

"बत्ती जलाओ."

अंधेरा और उजाला—उजाला और अंधेरा.

कुंदन ने लाइट जला दी.

अब उसने देखा कि डाइरेक्टर बासु मिस शकुंतला को उस लाइट के दायरे में अलग-अलग एंगल खड़ा करके देख रहे हैं और कहते जा रहे हैं, "अब कुछ बना ये शॉट".

और फिर डाइरेक्टर और मोटे कैमरामैन बदू भाई की एक कानाफूसी कानफ्रेंस हुई, जिसमें वह सिर्फ बार-बार 'नंबर सत्ताइस' का जिक्र सुन रहा था और कुंदन सोचने लगा, "आज तो मेरी लाइट को बड़ी अहमियत दी जा रही है".

कैमरामैन गुजराती और डाइरेक्टर बंगाली, और मिश्रित जबान हिंदुस्तानी. बडी देर तक वहस होती रही और आवाजें धीरे-धीरे बुलंद होती गयी—

"हम बोलता, चदूभाई इफेक्ट मांगता"—

"वह ठीक है साहब पर इतने ऊंचे से सिर्फ एक लाइट देंगे तो एकदम पिक्चर डार्क हो जायेगी. कम से कम दो सन स्पाट और दो-तीन वेबीज् दें तो..."

"नो-नो'''यू डोंट अंडरस्टैंड चंदू भाई. अपने को एक लाइट का सर्कल मागता. बस जब कैमरा क्रेन पर ऊपर लांग शॉट में जायेगा इस लाइट के सर्कल मे हीरोइन खडी होगी...ऊपर देखती हुई...लाइट उसकी आखो मे...!"

"पर बासु साहब, चालीस फिट ऊपर से लाइट मारेंगे तो सर्किल बहुत बडा बनेगा और लाइट इतनी डिफ्यूज होगी कि कुछ रजिस्टर नही होगा.'

"हम नही जानते तुम कैमरामैन है, कोई तरकीब निकालो.'

कुदन छह महीने से इस इंतजार मे था कि उसे अपनी कारगुजारी दिखाने का कोई मौका मिले. वह ऊपर ही से चिल्लाया, "चदू भाई! अगर लाइट चालीस फिट के बजाय बीस फिट पर आ जाये तो चलेगा?"

एक लाइट कुली को दखल करते देखकर सब दंग रह गये. चदू भाई का जी चाहा कि उसे झिड़क दे मगर फिर उसे ख्याल आया कि कुदन की राय कुछ बुरी नही है. डाइरेक्टर बासु तो खिल गये, "यस-यस दैट इज राइट —लाइट नीचे आ जायेगा तो सर्किल छोटा हो जायगा और डिफ्यूज भी नही होगा."

"पर बीस फिट पर नया तख्ता लगाने और लाइट फिक्स करने मे तीन-चार घंटे लग जायेंगे"

चदू भाई ने पहले से मामला साफ कर देना मुनासिब समझा क्योकि हमेशा फिल्म मुकम्मल होने मे जो देर लगती थी उसका जिम्मेदार उसी को ठहराया जाता था.

"कोई परवाह नही." डाइरेक्टर बासु ने फैसले के अंदाज मे कहा, "मगर शॉट भी तो क्या सुदर होगा...!"

"नही-नही ये क्या गुंदर-बुदर लगाया है" ये सेठ जी थे. स्टूडियो के मालिक —"पिक्चर वैसे भी लेट हो गयी है और तुम लोग वही टेक पे रिटेक किये जा रहे हो. मेरा पैसा हराम का नही है. अगर दूसरा शॉट आधे घटे मे ले सकते हो तो लो, नही तो पहले शॉट को श्रो.के. करो."

स्टूडियो के समाज में सेठ जी का दर्जा बादशाह बल्कि डिटेक्टर का था. कुंदन जानता था कि स्टूडियो के अनलिखे कानून से हर लाइट कुली को असिस्टैंट कैमरामैन की गालिया खानी पड़ती हैं, असिस्टैंट कैमरामैन खुद कैमरामैन की गालिया खाता है, कैमरामैन डाइरेक्टर की डांट सुनता है. पर अगर कोई डाइरेक्टर को भी सख्त सुस्त कहने का अख्तियार रखता है तो वह सेठ जी है; उनके सामने किसी और को बोलने की हिम्मत भी नहीं होती थी, पर आज वह खतरे मे पडने के लिए तैयार था वह जानता था कि इसके बगैर उसे तरक्की करने का मौका नही मिलेगा.

"सेठ जी!" वह चिल्लाया, "मैं पाच मिनट मे लाइट नीचे किये देता हू."

स्टूडियो के खोखले खोल मे इतने ऊपर से उसकी आवाज खौफनाक तरीके से गूजी. उसकी हिम्मत पर सब दंग रह गये. उसके साथी दूसरे कुली तो समझे कि आज कुंदन की खैरियत नही. ये जरूर स्टूडियो मे निकाला जायेगा. पर सबको हैरत हुई जब सेठ जी ऊपर देखकर बोले—

"कैसे करेगा?"

"अभी दिखाता हूं," और ये कहकर कुदन ने पटरे के दोनों तरफ और मजबूती के लिए जो फालतू रस्सी के टुकड़े बंधे हुए थे, उन्हें निकाल लिया. अब पटरा गाडर मे इकहरी रस्सी से लटका हुआ रह गया. मगर रस्सी मज-बूत थी और कुंदन का वजन कुछ ज्यादा नही था. (सस्ते होटलो मे खाते-खाते दस सेर कम हो चुका था) उसने रस्सी के टुकड़ों को मजबूत गांठें बांध-बाध कर बीस फिट लंबा कर लिया और एक सिरा पटरे में बाध कर और दूसरा लाइट के कड़े में डाल कर लाइट नीचे लटका दी. सब उसकी

अंधेरा –

और फुर्ती के कायल हो गये. खुद सेठजी ने "चलेगा" कहकर उसकी दाद दी "—लाइट ऑन."

रोशनी का घेरा मिस शकुंतला पर पड़ा—बिल्कुल ठीक न एक फिट इधर न उधर. मगर चंदू भाई *कभी-कभी लाइट से संतुष्ट नहीं होता था,* जब तक उसको एक दफा पूरा हार्ड कराके फिर पूरा सॉफ्ट न करा दे.

"ठीक है. पर जरा और नीचे हो जाये तो अच्छा रहेगा.'

अब मुश्किल ये थी कि रस्सी इतनी ही थी. लाइट को नीचे किया जाये तो कैसे? मगर आज कुंदन हार मानने वाला नही था. उसने रस्सी को पटरे मे से खोल लिया. बायें हाथ से पटरे को मजबूती से पकड़ा और दाहिने हाथ मे रस्सी के सिरे को थाम कर लाइट को दो फिट और नीचे लटका दिया—

"ठीक है."

"रिहर्सल!"

"यस, मिस शकुंतला?"

"भगवान मुझे सुंदर के रास्ते पर..." और मिस शकुंतला अटक गयीं क्योंकि जब उन्होंने ऊपर भगवान की तरफ देखा तो एक मन वजनी लाइट को ऐन अपने सर पर लटका पाया—

"ये लाइट मेरे ऊपर गिर पड़ी तो कौन जिम्मेदार होगा?"

और अब कुंदन को इसका जिम्मा भी लेना पड़ा—"घबराइये मत मिस शकुंतला! आपका बाल भी बाका नही होगा." वह दिल ही दिल मे खुश था. "आज पहली बार इतनी मशहूर हीरोइन से बात करने का मौका मिला है! कौन-जानता है कल इसके साथ दीपकुमार के बजाय शायद मैं खुद ही पार्ट कर रहा हूं."

खैर मिस शकुंतला ने हामी भरी—"रिहर्सल" 'ओ.के.' *हुआ, सीटियां* बजीं दरवाजे बंद हुये. और शॉट शुरू हुआ.

"साउंड स्टार्ट."

"दो सीटियां'

"कैमरा!"

"क्लैप!"

कैमरा क्रेन पर चढ़ा हुआ था. आहिस्ता-आहिस्ता शकुंतला के क्लोजअप से कैमरा पीछे और ऊंचा होता चला गया.

और चालीस फिट ऊंचे एक पतले तख्ते पर लटका हुआ, एक हाथ से सहारा लिये हुये, और दूसरे में एक वजनी लाइट लटकाये हुये कुंदन सोच रहा था—

"ये शॉट मेरा है. मैं न होता तो कभी इस तरह न लिया जाता." पर उसके माथे पर पसीना फूट रहा था. बोझ से उसके दायें हाथ की रगें खिंच रही थी, और बायां हाथ सुन्न हुआ जा रहा था. और उसके कानों में मिस शकुंतला के अल्फाज गूंज रहे थे—

"ये लाइट मेरे ऊपर गिर पड़ी तो कौन जिम्मेदार होगा?"

नीचे की तरफ नजर की तो सेट पर हर चीज—कैमरा, कुर्सियां, लाइट्स घूमती नजर आयी.

आहिस्ता-आहिस्ता मिस शकुंतला ने अपनी नजर ऊपर उठाई—भगवान की तरफ, कुदन की तरफ. रोशनी ऐन उसकी आंखों में पड रही थी. वह कुंदन को नही देख सकती थी, मगर वह उसको देख रहा था, उसके हसीन चेहरे को जो सफेद साड़ी के आंचल मे नूरानी मालूम हो रहा था...

और कुंदन एक लमहे के लिए भूल गया कि वह एक हाथ में वजनी लाइट संभाले हुए है. पतले तख्ते का संतुलन बिगड़ गया और रस्सियां टूटी नहीं मगर एक तरफ को इस तरह खिंच गयी कि कुंदन को सख्त झटका लगा. मगर उसका बायां हाथ रस्सी से फिसल कर तख्ते पर न लगता और वहां उसकी उंगलियां मजबूती से न जम जाती और अगर लाइट वाली रस्सी पर उसके दायें हाथ की गिरफ्त जरा भी ढीली पड़ जाती तो लाइट और कुंदन दोनो चालीस फिट नीचे मिस शकुंतला को चकनाचूर करते हुये स्टूडियो के सीमेंट के फर्श पर आ जाते. मौत के खौफ की सनसनाहट उसके तमाम बदन में दौड़ गयी पर उस वक्त अपनी जान से भी ज्यादा उसे अपने प्रादे की फिक्र

थी जो उसने मिस शकुंतला से किया था. उसके दायें हाथ की उंगलियां रस्सी में गड़ गयीं और उसने लाइट को हिलने तक न दिया.

शॉट जारी रहा. इस ड्रामे से बेखबर मिस शकुतला अपना डायलॉग बोलती रहीं—"ऐ भगवान! मुझे सुंदर के रास्ते पर चलने की शक्ति दे!" और सिवाय चंद दूसरे लाइट कुलियो के जिनके मुंह से तकरीबन चीख निकल गयी थी और सेठ जी के, जो कोने में खड़े सब देख रहे थे, किसी को न मालूम हुआ कि इस शॉट की खातिर कुंदन ने तकरीबन अपनी जान ही दे दी.

शॉट खत्म हो गया.

"हाऊ इज दैट फार साउंड?"

"ओ. के."

"ओ. के."

"ओ. के."

डाइरेक्टर बासु खुश थे. मिस शकुतला को मुबारकबाद दे रहे थे. चंदू भाई खुश थे, अपने असिस्टेंट को बता रहे थे कि फिल्म के लाइट इफेक्ट में कोई दूसरा कैमरामैन उनका मुकाबला नहीं कर सकता. मिस शकुतला खुश थी और दीपकुमार को बता रही थी कि, ऐसे शॉट मे वो दुनिया से बेखबर होकर एक्टिंग करती हैं—"अगर मुझ पर ऊपर से वह लाइट गिर भी पड़ती तो मुझे पता न चलता". और उन्हे नहीं मालूम था कि उनकी मौत उसके कितने करीब से गुजर गयी थी.

ये आखिरी शॉट था. सब रुखसत होने लगे. कुंदन नीचे उतर आया. और ये देख कर हैरत मे रह गया कि सेठ जी उसके इंतजार मे खड़े थे—

"ऐ, क्या नाम है तेरा?"

"कुंदन, सेठ जी."

"शाबाश! तू बड़े जिगर का आदमी है हमने देखा तूने मिस शकुंतला का जान बचा लिया."

"यह तो मेरा फर्ज था, सेठ जी..."

"बोल क्या इनाम चाहिये?"

कब से वह इस लमहे, इसी मौके के इंतजार में था—"मै ये कहूंगा—मैं ये कहूगा सेठ जी मुझे एक्टिंग का चास चाहिये. मैं हीरो बनना चाहता हूं.

एक बार—बस एक बार मौका दीजिये." मगर उस वक्त उससे कुछ न कहा गया, सो सेठ जी ही बोले—

"अच्छा कल आफिस में मिलो. हम तुमको कोई इनाम भी देगा और कोई स्पेशल काम भी देगा."

और जब कुदन स्टूडियो से बाहर आया तो सबकी नजरें उस पर थी. और उसके कदम जमीन पर नहीं, हवा पर पड़ रहे थे.

कुंदन सोकर उठा तो स्वरूप और मिर्जा दोनों नहा-धो, माग पट्टी करके बाहर जाने को तैयार खड़े थे. इन तीनों ने दादर मेन रोड पर रंजीत स्टूडियो के करीब की एक चाल में साझे की एक खोली किराये पर ले रखी थी, तीनो अपने-अपने घर से भागकर बंबई आये थे. तीनो फिल्म स्टार बनने की दिल मे रखते थे.

मिर्जा बोला—

"क्यों बे कुदन, चल आज तुझे भी काम दिलवा दें, कोर्ट का बडा सेट लगा हुआ है आसिफ स्टूडियो में, वहा तीन-चार सौ आदमियो की जरूरत है कोर्ट सीन के वास्ते." मिर्जा जो इंटर फेल था और पजाब का रहने वाला था और जिसका कद छह फिट, छह इंच था और जो एक वक्त मे बीस-पच्चीस चपातियां खा सकता था और जिसपर एक्स्ट्रा लड़किया जान देती थी, डेढ बरस से फिलमी किला सर करने की कोशिश कर रहा था मगर सिवाय वाडिया की एक स्टंट फिल्म के जिसमे उसने चारखाने की कमीज और जींस पहनकर एक विलायती किस्म के गुडे का पार्ट किया था—उसको कोई कामयाबी न हुयी थी. इसलिए वह एक्स्ट्रा की हैसियत से आठ-दस दिन भीड़ के किसी सीन मे खडे होने की जगह मिल जाये उसी को गनीमत समझता था. आज 'रंजीत' मे डाकू बना हुआ है, तो कल 'राजकमल' में साधू, परसों 'फिलिस्तान' में मुगल दरबारी तो उससे अगले दिन 'फिल्म सिटी' मे विक्रमाजीत का सैनिक. वह बंबई मे 'एक्स्ट्रा' का काम करने नही, स्टार बनने आया था, मगर मुश्किल ये थी कि उसको भूख बहुत लगती थी और इतना बड़ा जिस्म इंधन भी बहुत मागता है. इसलिए जब छह महीने तक हर स्टू-

डियों का चक्कर लगाने के बाद उसको कहीं जगह न मिली तो उसने भी शर्म को ताक पर रखकर दादा गुंजा एक्स्ट्रा सप्लायर के यहाँ अपना नाम लिखवा दिया, हां तो, जब मिर्जा ने कहा—

"क्यों बे कुंदन! चल आज तुझे भी काम दिलवा दूं." तो स्वरूप बोला—

"छोडो यार, ये लाट साहब तो जब तक हीरो का पार्ट नहीं मिलेगा कैमरा के सामने नही आयगे."

"ये मैंने कभी नहीं कहा." कुंदन ने पलंग से उठते हुये जवाब दिया—

"मगर ये जरूर है कि एक्स्ट्रा का गूंगा काम नही करूंगा. वैसे एक लाइन भी बोलने के लिये मिल जाये तो मैं तैयार हूं."

"बड़े नखरे हैं तुम्हारे. मगर ये लाइट कुली का काम करते शर्म नही आती तुम्हे?"

ये स्वरूप का मुस्तकिल तकिया कलाम था. अपने दोस्त और साथी को ये 'नीच' काम करते देखकर उसे वाकई शर्म आयी थी और इस मसले पर रोज उसकी और कुंदन की बहस होती थी. स्वरूप कानपुर में बी. ए. में पढता था. जब वह अपनी सौतेली मां के जुल्म से छुटकारा पाने के लिए बंबई चला आया था. रंग गोरा, सूरत-शक्ल अच्छी थी, गाना भी थोडा बहुत जानता था. यार लोगो ने सलाह दी कि फिल्मो में किस्मत आजमाई करो. दस महीने से कर रहा था. कद किसी कद्र छोटा था, फिर भी वह बी. एम. व्यास से दो इंच लबा ही था. और ऐसे कमलहासन कौन-सा छह फुटा है! मगर प्रोड्यूसरो, डाइरेक्टरो को उसे न लेने का बहाना हाथ आ गया था. एक जगह सुना किसी 'नये चेहरे' को हीरो के लिये लेना चाहते हैं. वहां कोशिश की. कामयाबी की उम्मीद मालूम होती थी कि प्रोड्यूसर साहब को खयाल आया कि उसका कद छोटा है. हेमा के साथ जोडी नही मिलेगी...! स्वरूप वापस आया और अगले दिन मिर्जा को भेजा कि शायद उसकी लंबाई प्रोड्यूसर साहब को पसद आ जाये. मगर मिर्जा को देखकर वे बोले—

"हम तो टीना या पद्मिनी को हीरोइन बनाने की सोच रहे हैं. तुम तो बहुत लंबे हो. जोड़ी नहीं मिलेगी." (ये और बात है कि यही प्रोड्यूसर साहब अपनी पिछली फिल्म में अमिताभ और स्मिता की जोड़ी पेश कर चुके थे) ये सुनकर स्वरूप बेचारा भागा हुआ गया कि आप अगर हेमा की बजाय टीना या पद्मिनी को ले रहे है तो मुझे हीरो का पार्ट दे दीजिये. प्रोड्यूसर साहब बोले—"वो अफवाह गलत थी." वह वाकई हेमा ही को ले रहे है. बाद मे मालूम हुआ कि उन्होंने अपने साले को ले लिया और साथ ही हीरोइन जीनत को बनाया है.

सो इस पर मिर्जा ने (जो जुमलेबाजी का माहिर था) एक लतीफा गढ़ा जो हर स्टूडियो में दोहराया जा रहा था.

प्रोड्यूसर एक बड़ी और अहम फिल्म के मुहूरत से पहले तमाम मशहूर एक्टरो को इंटरव्यू के लिये बुलाता है ताकि उनमें से एक को हीरो चुना जाये.

सबसे पहले दिलीपकुमार आते हैं. मगर उनको इस बिना पर नामंजूर कर दिया जाता है कि वह मोटे होते जा रहे हैं.

फिर संजीवकुमार आता है, और उसको गंजा होने की बिना पर नामंजूर कर दिया जाता है.

फिर अमिताभ आता है और उससे कहा जाता है कि वह जरूरत से ज्यादा नाजुक मिजाज है.

फिर धर्मेन्द्र आता है और उसको जरूरत से ज्यादा पहलवान होने पर 'अनफिट' कर दिया जाता है.

फिर देव आनंद—मगर वह बहुत दुबला है.

फिर शम्मी कपूर—मगर वह जोकर मालूम पड़ता है; इसलिए संजीदा किरदार नही कर सकता.

फिर भारत भूषण—मगर वह साधु मालूम होता है. इसलिये कॉमेडी रोल नही कर सकता.

आखिर मे प्रोड्यूसर का सेक्रेट्री पूछता है—"सेठ जी! आपने तो हर हीरो को 'नापास' कर दिया है, आखिर फिर लेंगे किसे?"

"वह तो मैं पहले ही तय कर चुका हूं." सेठ जी बोले—"अपनी बीवी के भाई के दामाद के साले को लूगा."

"आओ दादा, आओ." मिर्जा ने आने वाले का आदर करते हुये कहा—"बस हम भी चलने के लिए तैयार ही हैं."

"क्यों दादा, कुछ सोडा लेमन?" स्वरूप के लहजे में कुछ खुशामद का पहलू था.

"नहीं, सोडा-वोडा कुछ नहीं चाहिये, टाइम हो गया, अब चलना चाहिये नौ बजे मलाड पहुंचना है."

दादा गुजा, जिसको फिल्मी दुनिया का हर आदमी 'दादा' के नाम से पुकारता था, एक एक्स्ट्रा सप्लायर था. यानी कमीशन पर फिल्म कंपनियों के लिये एक्स्ट्रा मुहैया करता था. हर एक्स्ट्रा को जो कुछ प्रोड्यूसर से मिलता उसमें से आधा दादा की जेब में जाता. सैकड़ों नौजवान और फिल्मी शोहरत के शौकीन लड़के और लड़कियों का वह 'दादा' नहीं बल्कि 'अन्नदाता' था. जिनसे वह खुश रहता था, उनको महीने में अच्छी खासी आमदनी हो जाती थी और जिनसे नाराज होता था उनको दूसरे एक्स्ट्रा सप्लायर भी काम दिलवाते घबराते थे कि कहीं दादा को मालूम हो जाये और उसका गुस्सा उन पर उतरे. मिर्जा और स्वरूप ने मुद्दत तक दादा के वसीले के बगैर काम मिलने की कोशिश की थी, मगर हर जगह नाकामी का मुंह देखने के बाद उन्होंने भी उसकी खुशामद शुरू कर दी थी. ये दोनों पढ़े-लिखे, खुशपोश और अच्छे घरानों के लड़के थे. ऐसे एक्स्ट्रा मुहैया करने से प्रोड्यूसरों में दादा की साख बढ़ती थी. इसलिए वह भी उनपर खास इनायत रखता था और दूर जाना हो तो अक्सर अपनी खटारा किस्म की मोटर में साथ ही ले जाता था.

पर न जाने क्यों कुंदन को दादा की शक्ल से दहशत होती थी. अव्वल तो उसकी शक्ल थी ही खौफनाक! गहरा सांवला रंग, चेहरे पर पच्चाससाला अय्याश जिंदगी के गहरे निशान. उस पर दाढ़ी हमेशा तीन-चार दिन की बढ़ी

हुयी. गंजे सर पर एक दाद की पपड़ी जमी हुयी थी जिसमें से कभी-कभी पीला-पीला पानी भी बहता रहता था. बायें गाल से लेकर पेशानी तक एक पुराने जख्म का निशान. कहते हैं फोरास रोड की किसी तवायफ के कोठे पर दादा का किसी दूसरे मवाली से झगड़ा हो गया था. दोनों तरफ से चाकू चले. दादा को गहरा जख्म आया. दस दिन बाद, अस्पताल से घर आ गया मगर उसके रकीब की लाश रातों-रात कोठे से सीधी श्मशान भूमि ले जायी गयी. दादा गुंजा इस जख्म के निशान को बड़े फख्र से दिखाता था वह अक्सर कहता था—"इसे देखकर सब समझ जाते हैं कि दादा गुंजा के मुकाबले मे आना कितना खतरनाक है." इसके अलावा उसकी आंखों मे हमेशा नशे के लाल-लाल डोरे होते थे और मुंह से ठर्रे और ताड़ी की बू आती थी.

बावजूद इस हुलिये के दादा गुंजा अपने-आपको बड़ा रंगीला समझता था. उसका दावा था कि हर रात एक नई औरत उसके पहलू मे होती है. सैकड़ो एक्स्ट्रा लडकियो मे वह अपनी इनायत की कीमत वसूल कर चुका था. उसकी हवस की प्यास बुझाये बगैर किसी एक्स्ट्रा लडकी को काम मिलना नामुमकिन नहीं तो मुश्किल जरूर था. कहा जाता था कि एक लड़की ने इनकार कर दिया था तो दादा ने रात के अंधेरे मे उसके चेहरे पर तेजाब फेंक दिया था और वह बेचारी उम्र भर के लिये मुह दिखाने के काबिल न रही

इन सब किस्सों को सुनकर कुंदन को दादा की शक्ल से घिन आने लगी थी. जहां तक मुमकिन होता वह बगैर ऐसे खौफनाक आदमी को दुश्मन बनाये उससे अलग रहने की कोशिश करता था. दूर सडक पर से आता देखता तो रास्ता काट जाता. मगर दादा उसपर खास नजर रखता था. उसे शिकायत थी कि कुंदन भी उसके रजिस्टर पर अपना नाम क्यो नही लिखवा लेता. और जब भी वह मिलता वह इस बात की याद जरूर दिलाता.

"क्यो कुंदन बाबू" आज भी उसने आते ही पुराना किस्सा छेड दिया—

"तुम तो बड़े आदमी हो, एक्स्ट्रा का काम क्यों करने लगे, पर याद रखो मैंने दर्जनों को हीरो-हीरोइन बना दिया है...दर्जनों को. अगर साल भर में तुम्हें लीडिंग रोल न दिलवा दूं तो मेरा नाम भी गुंजा नही." और

फिर अपना मुंह इतने करीब ले जाकर कि कुदन को ताड़ी के भभके आने लगे —"लौंडिया जो मिलेंगी वह अलग. तुम्हारे जैसे लौंडे के पीछे तो कुतियों की तरह भागेंगी, क्यों?...क्या कहते हो?"

कुंदन ने बात टालने की गरज से गुफ्तगू को हंसी-मजाक के रुख में फेरने की कोशिश की—"जाओ भी दादा—बस देख रहा है तुम्हारी एक्स्ट्रा लड़कियों को. न जाने कहां का कूड़ा-करकट उठा लाते हो. एक की भी तो ढंग की सूरत शक्ल नही है."

इस किस्म के मजाक से दादा बड़ा खुश होता था. क्योकि वह हर शख्स से इसी सतह पर बातचीत करने का आदी था. फिल्म इंडस्ट्री मे उसे अगर चिढ थी तो उन लोगो से जो पाक बनते थे. या शरीफ खानदानों की रवायत का रोना रोते थे. पढ़े-लिखे एक्टरो और अच्छे खानदान की एक्ट्रेसों का वह हमेशा मजाक उडाया करता था. या उनको बदनाम करता फिरता. इसलिये कि वे उसको मुह नही लगाते थे और उनके सामने उसे अपनी कमजोरी का सख्त एहसास होने लगता था. इसलिए जब कभी भी मौका मिलता वह पढ़े-लिखे एक्स्ट्रा लड़को को मुफ्त शराब पिला-पिलाकर और आवारा एक्स्ट्रा लडकियो से मेल-मुलाकात कराके उनको अपनी टोली मे शामिल करने की कोशिश करता. स्वरूप और मिर्जा अभी तक उसके साथ हमप्याला व हमनेवाला तो नहीं हुये थे, मगर उसकी खुशामद जरूर शुरू कर दी थी. उसे यकीन था कि बहुत जल्द मुकम्मल तौर से 'राहे रास्त' पर आ जायेंगे. अगर कोई अब तक उसके जाल मे नहीं फंसा था तो वह कुदन था. इसलिये दादा इस ताक मे था कि इस सरफिरे लौंडे को राम करने के लिये कौन-सी चाल चले. जैसे ही कुदन ने एक्स्ट्रा लडकियो की बदसूरती का ताना दिया, वह खुशी से कहकहा मार कर हस पडा.

"लौडे हो कुदन बाबू! लौडे, तुम क्या जानो काम की लौंडिया कैसी होती है? औरत की शक्ल से क्या लेना: रात के अंधेरे मे काली-गोरी सब एक जैसी दिखती है. असल चीज तो कुछ और ही है, मिस्टर!" ये कहकर उसने दायें हाथ की उंगलियो से एक गदा निशान बनाया जिसको देखकर कुदन का

चेहरा शर्म से सुर्ख हो गया. उसे क्या मालूम था कि दादा उसके मजाक को कहां से कहां ले जायेगा.

"अच्छा खैर." दादा ने अपना सिलसिला कलाम जारी रखते हुये कहा, "आओ तुम्हे एक तोहफा माल दिखाता हूं, तुम भी कायल न हो जाओ तो दादा गुंजा नाम नही. आओ जी मिर्जा और स्वरूप. तुम भी क्या कहोगे कि दादा की पहुंच कहां तक है."

ये कहकर उन सबको सड़क की तरफ वाली खिड़की तक ले गया और बाहर इशारा किया, जहां उसकी मोटर के पास एक लड़की खड़ी थी कुदन समझा था दादा गुंजा की मुस्तकिल कानी खुदरी, भद्दी लड़कियो में से कोई होगी. स्याह मुंह पर पाउडर की परत जमाये, नीले होंठो पर लाल लिपस्टिक मले, कानो मे पीतल के लबे-लबे झूलते हुये बूंदे, और तंग ब्लाउज मे उबलता हुआ सीना...मगर ये तो कोई और ही किस्म की लड़की थी. अव्वल तो वह बहुत कम उम्र मालूम होती थी, शायद सत्रह साल से ज्यादा न हो सफेद साड़ी, जिसका पल्लु सर पर था, मोटर का सहारा लिये नीची नजरें किये खड़ी थी. किसी तरह से फिल्मी एक्स्ट्रा नही मालूम होती थी. फिर कुदन को खयाल आया शायद ये मासूमियत भी एक फरेब हो, वरना किसी शरीफ लड़की का दादा गुंजा से क्या ताल्लुक?

"क्यों, क्या कहते हो? है माल बढ़िया?"

"लौंडिया है जोरदार," मिर्जा ने तजुर्बेकार 'लड़कीबाज' की हैसियत से अपनी राय का इजहार किया.

"शक्ल सूरत से काफी सीधी मालूम होती है" स्वरूप ने कहा, "घर से भाग कर तो नही आई है? कभी इसके घर वालों के साथ मुकदमेबाजी में न फंस जाओ दादा?"

दादा ने जवाब में एक खौफनाक कहकहा लगाया, "दादा कच्ची गोलियां नहीं खेला, मिस्टर! और इस लड़की का तो बाप खुद मेरे सुपुर्द कर गया है, न जाने कहां से नाम सुनकर पूछता-पूछता आज ही सुबह पहुंच गया मेरे कमरे

पर. कहने लगा, जी मेरी लड़की को फ़िल्मों में काम करने का बड़ा शौक है. इसे कहीं नौकरी करवा दो. मैंने कहा 'देखो भई कोशिश करूंगा. वैसे तुम्हारी लड़की की शक्ल सूरत भी मामूली ही है, खैर एक्स्ट्रा में चल जायेगी. आज स्टूडियो में लिये जाता हूं साथ. किस्मत अच्छी होगी तो काम मिल जायेगा." इसपर वह बुड्ढा कहता है, "तो मैं इसे छोड़ जाता हू. हा, इक दस रुपये पेशगी मिल जायें तो बड़ी मेहरबानी हो." सो पांच रुपये देकर उसे रुख़सत किया तो जाते-जाते कहता है, "दादा, जरा मेरी लड़की का ख्याल रखना" मैंने कहा, "फ़िक्र न करो, ऐसा ख्याल रखूंगा कि याद करोगे."

मिर्जा जरा ज्यादा बेतकल्लुफ़ था, बोला, "क्यों दादा, तो फिर कुछ रिहर्सल वगैरा हुआ अभी?"

दादा के जवाब में इतनी गरमजोशी न थी, "हां...हुआ...मगर अभी जरा बिदकती है. खैर, दो-चार दिन में ठीक हो जायेगी. मैंने इसके बाप से कह दिया है कि रात को देर हो जाया करेगी तो मैं खुद पहुंचा दिया करूंगा."

"बड़े उस्ताद हो तुम भी दादा, कच्चा देखो न पक्का, माल हड़प कर जाते हो," मिर्जा ने कहा, और इन लफ्जों में अपनी 'मर्दानगी' की तारीफ सुनकर दादा खिल गया. बड़े तपाक से बोला, "हां, भैया कुछ दाल-दलिया तो होना ही चाहिये. नहीं तो हम बेचारे तो भूखे ही मर जायेंगे." और फिर खिड़की की तरफ देखकर "क्यों कुंदन बाबू? क्या सोच रहे हो...? बोल क्या राय है?"

कुंदन की नजरें अभी तक खिड़की के बाहर जमी हुई थीं. वह सोच रहा था, "ये लड़की किसी शरीफ घराने की मालूम होती है. न जाने क्यों इसका बाप इसे दादा गुंजा जैसे इनसानी भेड़िये के सुपुर्द कर गया है. अब इसकी खैरियत नहीं. ये उसे खराब किये बगैर चैन न लेगा. अगर मुझमें इतनी हिम्मत हो, अगर मैं फिल्मी हीरो की तरह दिल-गुर्दे वाला हूं, तो इसी वक्त नीचे जाकर उस लड़की से साफ कह दूं, 'जा, अपने घर जा, क्यों गंदगी और आवारगी

के इस समुद्र में डूबने आयी है. दादा गुंजा से खबरदार, ये सैकड़ों की आबरू लूट चुका है. तुझे खराब करने में ये कोई तरीका बाकी नहीं छोड़ेगा. फिर भी अगर वह न माने तो मैं उसे जबरदस्ती उसके घर ले जाऊंगा. इसके मां-बाप से मिलकर उनसे कहूंगा कि अपनी लड़की को तबाही से बचायें." वह बहुत कुछ सोच रहा था, मगर जब दादा गुंजा ने उससे सवाल किया तो उसने खिड़की की तरफ से मुंह फेरते हुये जवाब दिया, "हां, बुरी नहीं है."

"अच्छा अब चलना चाहिये. बहुत देर हो गयी. "दादा गुंजा ने अपनी कलाई पर लगी हुयी सोने की घड़ी को देखते हुये कहा. इस घड़ी पर उसे बड़ा नाज था. एक बार उसने नेपियन सी रोड पर एक राजा के महल में रात भर नंगा नाचने के लिये दस एक्स्ट्रा लड़कियों का इंतजाम किया था. लड़कियों को हजार-हजार रुपये मुआवजा मिला था, और उसे पांच हजार रुपये और ये सोने की घड़ी, इनाम में.

दादा गुंजा, स्वरूप और मिर्जा खट खट करते, जीना उतरते हुये नीचे चले गये और कुदन फिर खिड़की के पास आ खड़ा हुआ. वह लड़की अभी तक जमीन पर नजरें जमाये खड़ी थी. मगर जब दादा गुंजा मोटर के करीब पहुंचा तो लड़की ने नजर उठाकर, खामोशी से उसकी तरफ देखा. सिर्फ एक लम्हे के लिये दो बड़ी-बड़ी आंखें बेपर्दा हुयी और फिर लंबी पलकों में छुप गयी. पर न जाने क्यों कुदन को उन आंखों में, सर और गर्दन के झुकाव में, एक अजीब मायूसी नजर आयी, जैसे एक बकरी लाचारी से कसाई की छुरी की तरफ देखती है और कुछ नहीं कर सकती.

दादा गुंजा की मोटर रवाना हो गयी. चंद एक्स्ट्रा लड़कियां सीनों को नुमाया किये हुए, टूटे चप्पल पहने, खोखली-सी हंसी हंसती हुई रंजीत स्टूडियो की तरफ चली गयी. एक प्रोड्यूसर की शानदार कार तेजी से गुजर गयी. एक लंगड़ा कुत्ता 'च्याऊं-च्याऊं' करता हुआ भागा. एक डायलॉग राइटर 'मुंशीजी' मोटे शीशों की ऐनक लगाये, कागजों का पुलिंदा बगल में दबाये ईरानी होटल में चाय पीकर निकले और फिर कुछ सोचकर श्री सौउंड स्टू-

डियो की तरफ चल दिये. एक मशहूर हीरोइन की सुर्ख रंग की मोटर सेंट की खुशबू बिखेरती गुजर गयी, दादर मेन रोड पर फिल्मी कारवां गुजरता रहा. मगर कुदन को अपने कमरे मे दादा गुंजा की बू आती रही—जिसमें ताड़ी, ठर्रा, पसीना, पायरिया, दाद का पीला पानी, अय्याशी, गुनाह और न जाने कितनी बीमारियों का मिश्रण था.

अभी दस नही बजे थे कि कुदन सेठ साहब के दफ्तर के सामने जाकर बैठ गया। यह तो वह जानता था कि आमतौर से सेठ ग्यारह-बारह से पहले कभी नही आता पर सोचा कौन जाने आज सवेरे ही आ जाये! आखिर कंपनी का मालिक ठहरा, जब चाहे आये. और आज कुदन इस बात पर तुला हुआ था कि सेठ जब भी आये सबसे पहले उसकी नजर उसी पर पड़े.

स्टूडियो के लान मे रोज की तरह चहल-पहल थी, डाइरेक्टर हाडा की शूटिंग का बोर्ड नौ बजे का लगा था, मगर उनकी हीरोइन मिस नाजनीन अभी नही आयी थी, इसलिए काम रुका हुआ था. इमली के पेड के नीचे दो असिस्टेंट डाइरेक्टर और एक असिस्टेंट कैमरामन खड़े चंद एक्स्ट्रा लडकियो से मजाक कर रहे थे. दो कैमरा कुली भारी-भारी लाइटों को स्टूडियो नंबर दो से उठाकर स्टूडियो नंबर एक मे ले जा रहे थे. सावले रग की गठीले बदन की औरतें लकडी के भारी-भारी तख्ते उठाये 'आर्ट डिपार्टमेंट' मे लिये जा रही थी और एक सूखे हुए जिस्म और धंसी हुई आंखो वाले 'मुशीजी' मोटे-मोटे शीशो वाली ऐनक मे से उन मजदूर औरतो की सुडौल टांगो और उनके कूल्हो के उभार का जायजा ले रहे थे.

साढे दस बजे ही थे कि मिस नाजनीन की शानदार मर्सडीज स्टूडियो मे दाखिल हुई. एक असिस्टेंट डाइरेक्टर ने लपक कर मोटर का दरवाजा खोला, दूसरे ने मिस नाजनीन का मेकअप बाक्स सभाला और खुद डाइरेक्टर हाडा जब अपनी हीरोइन का स्वागत करने आगे बढे, तो उनको मिस नाजनीन की वालिदा ने निहायत भारी पानदान थमा दिया. हमेशा की तरह सबसे पहले मोटर से मिस नाजनीन की नानी यानी चुनिया बाई उतरी. उनके बाद नाजनीन खुद और बाद में उनकी वालिदा मुन्नी जान. इस तरह ये जुलूस स्टूडियो की तरफ चला. लेकिन मोटर पर गायब होने से पहले कुदन ने सुना

कि चुनियां बाई अपने पोपले मुंह से डाइरेक्टर हांडा को निहायत 'रूह अफजा' किस्म की गालियां सुना रही है क्योंकि पब्लिसिटी मैनेजर ने किसी इश्तिहार में मिस नाजनीन का नाम हीरो कमल राज के बाद लिखा दिया था.

थोड़ी देर के लिये स्टूडियो के लान में सन्नाटा छाया रहा, मिस नाजनीन का ड्राइवर मूछों पर ताव देता हुआ मोटर में उतरा और कैंटीन में चाय पीने चला गया.. सेठ के दफ्तर के सामने बरामदे में टेलीफोन की घंटी बजी और देर तक बजती रही. कुंदन का इरादा हुआ कि पूछे कि किसका फोन है? मगर वह झिझक कर रह गया कि शायद सेठ जी के लिए हो और इस हरकत पर उसको डांट पड़े. आखिर दफ्तर के अंदर से एक क्लर्क निकला और उसने फोन उठाया.

"हैलो...ग्रेट आर्ट पिक्चर्स...कौन चाहिए? मिस नाजनीन?...वह शूटिंग में है...हम बुला नहीं सकते...तुम्हारा नाम?...नाम नहीं बता सकते?...नंबर बोलो तो हम लिखकर भेज देगा...न नाम बताता है न नंबर, तो हम क्या करेगा...जाओ भाड़ में!" क्लर्क घड से फोन बंद करके अंदर चला गया. कुंदन सोचता रहा, ये किसने मिस नाजनीन को फोन किया था? शायद उसका कोई आशिक हो इसलिए नाम बताने से इनकार कर रहा हो. कितना खुशनसीब होगा वह जिससे नाजनीन-जैसी हसीन लड़की मोहब्बत करती है! वैसे तो कुंदन का नौजवान और नातजर्बेकार दिल हर स्टार को देखकर फिसल पड़ता था, मगर नाजनीन की वह मुद्दत से पूजा करता था.

वैसे ये लड़की तवायफों के खानदान से थी मगर उसे स्कूल में तालीम दिलायी गयी थी और उसके बातचीत करने का ढंग बाजारी बिल्कुल न था. स्टूडियो में सबसे वह खुशमिजाजी से पेश आती थी. (ये बात और है कि मां और नानी की पहरेदारी में उसे किसी से ज्यादा बात करने का मौका नहीं दिया जाता था कि कहीं ऐसे-वैसे किसी टटपुंजिये नौजवान से मोहब्बत और शादी न हो जाये, और इन दोनों खुर्राटों के हाथ से सोने के अंडे देने वाली मुर्गी निकल जाए), और फिर उसके चेहरे पर और आंखों में एक अजीब दिलकश किस्म की हल्की-सी उदासी थी जिससे उसके हुस्न में और भी इजाफा हो गया था.

कुदन बेंच पर बैठा यह सोच ही रहा था कि उसने सामने से नाजनीन को आते देखा. अब उसने स्टूडियो की पोशाक पहन ली थी. घाघरे-चोली में वह कितनी खूबसूरत मालूम हो रही थी! उसके हुस्न के रोब से कुदन ने नजर हटा ली, मगर वह सीधी उस तरफ आयी.

"ऐ छोकरा...!" नाजनीन की सुरीली आवाज उससे मुखातिब हुई, "मेरा फोन तो नहीं आया था?"

"जी...जी...!" कुदन अपनी खुशकिस्मती से बौखला कर ऐसा गड़बडाया कि हकलाने लगा—"आया...तो था..."

"फिर तुमने क्या कहा?"

"जी...जी...मैंने तो कुछ नहीं कहा मगर वह...दफ्तर वालों ने मना कर दिया कि नहीं बुला सकते."

"गधे कहीं के," और कुदन ने देखा कि वह गुस्से से अपना निचला याकूती होंठ मोतियों जैसे दांतों से दबा रही है. फिर वह इधर-उधर देखकर धीरे से बोली, "अच्छा देखो, अब फोन आये तो तुम खुद उठा लेना और मेरे लिए हो तो मुझे सेट पर इशारा कर देना. चिल्लाना मत सबके सामने, समझे ना."

अभी वह बात कर ही रही थी कि एक बूढ़े गले के खासने की आवाज आयी. ये नाजनीन की नानी थी जो झूमती-झूमती चली आ रही थी. मगर उसकी आखें कमजोर थीं और उसे सिवाय करीब की चीजों के कुछ सुझायी नहीं देता था नाजनीन ने कुदन की तरफ इल्तजा भरी नजरों से देखा और गड़ाप से सेठ जी के कमरे में. उस कमरे का एक दरवाजा दूसरी तरफ खुलता था ठीक दो नंबर सेट के सामने.

पोपली बुढ़िया ने कुदन को अपनी दकियानूसी ऐनक के शीशों में से घूर कर देखा, "क्यों रे, नाजनीन तो इधर नहीं आयी?"

"नहीं बाई जी, वह नहीं आयी?"

"न जाने कहां मर गयी?" बडबडाती हुई बुढ़िया वापस चली गयी और कुंदन ने इतमीनान की सांस ली. वह भी कितना खुशकिस्मत था कि नाजनीन ने उसे अपना हमराज बनाया था. जान जाये पर इस भेद को वह किसी पर

कभी जाहिर न करेगा !

अभी वह इस इंतजार में था कि शायद नाजनीन के लिए फिर फोन आये कि एक टैक्सी आयी और उसमें से एक नौजवान हाथ में चमड़े का थैला लिये उतरा. गहरे रंग की पेंट, खुले गले की कमीज, नंगे सर, मोटे मोटे गोल शीशों की ऐनक, सर के बाल सूखे बेतरतीब और कांटों की तरह खड़े हुए, टैक्सी वाले को एक दस का नोट दिया और छः रुपये वापस लेकर जेब में रखे. जाहिर था कि टक्सी कहीं करीब ही से ली थी कि मील भर से कम का किराया देना पड़ा. टैक्सी वापस चली गयी और नौजवान कुंदन की तरफ आया.

"क्यों भई, सेठ साहब हैं अंदर?'

बंबई के सख्त माहौल में इतनी मुलायम जुबान सुनकर कुंदन हैरान हो गया मालूम होता था कि नौजवान उत्तर भारत का रहने वाला है.

"जी मैं खुद इंतजार कर रहा हूं. अभी तो नहीं आये, मगर आने वाले ही हैं. बैठिए."

नौजवान कुंदन के बराबर बैठ गया और बोला. "तब तो बेकार ही टैक्सी पर पैसे बरबाद किए."

ज्यादा समझने की जरूरत नहीं थी, कुंदन खूब जानता था कि स्टूडियो में नौकरी तलाश करने वाले दूर से लोकल ट्रेन या बस में चलकर आते हैं और दादर स्टेशन से टैक्सी ले लिया करते हैं, ताकि स्टूडियो वालों पर रोब पड़ जाय.

"तो आप भी काम के लिए आये हैं?" उसने पूछा.

"आया नहीं हूं, बुलाया गया हूं, सेठ साहब का खत गया था कि जितनी जल्दी हो सके बंबई आकर मिलिए, सो मैं चला आ रहा हूं."

कुंदन ने गौर से नौजवान को देखा. 'हीरो' किस्म की शक्ल उसकी हरगिज नहीं थी. उसने सोचा शायद कोई करैक्टर एक्टर हो?

"आपको मैंने किसी फिल्म में देखा नहीं अब तक, शायद अभी तक आपकी फिल्म निकली नहीं...?"

"मैं तो आज पहली बार किसी स्टूडियो के दरवाजे में दाखिल हुआ हूं."

"तो आप किसी पिक्चर में रोल के लिए...?"

"नहीं-नहीं, मैं एक्टर नहीं हूं, मैं कहानियां लिखता हूं."

"कौन-कौन सी कहानियां फिल्म हुई हैं आपकी?"

"कोई भी नही, मेरी कहानियां अब तक छपती रही हैं, फिल्मायी नहीं गयी."

"आपका नाम?"

"मेरा नाम तो माधव सिंह है, मगर मैं निर्मल के नाम से लिखता हूं"

निर्मल? निर्मल निर्मल?

तो यही उर्दू और हिंदी का मशहूर लेखक निर्मल था, जिसके अफसानों उपन्यासों, रेडियो फीचर व ड्रामों की सारे मुल्क मे धूम थी. जिसके रूमानी अंदाज ने हजारों लडकियों की रातो की नीद उचाट कर दी थी. कुंदन खुद कबसे निर्मल के चाहने वालो में से था.

निर्मल? मगर निर्मल तो एक बागी अदीब था. अपनी इकलाबी तहरीरो की वजह से दो बार जेल जा चुका था. अपने उपन्यास 'जन्नत मे जहन्नम' की वजह से रियासत कश्मीर मे उसका दाखिला गैर कानूनी करार दिया जा चुका था. उसकी कई किताबें जब्त हो चुकी थी और उनमे से दो-एक को तो हुकूमत भी खतरनाक समझती थी, क्योंकि उनमे मजदूरो और किसानो को इंकलाब की तरकीब बतायी गयी थी.

निर्मल? भला निर्मल का ग्रेट आर्ट पिक्चर्स के स्टूडियो में क्या काम? कुंदन किसी तरह मानने के लिए तैयार नही था कि 'हाय जानी' और 'जालिम जवानी' जैसी फिल्मे बनाने वाले सेठ जी निर्मल की किसी कहानी को भी फिल्माने के लिए तैयार हो जायें.

"तो निर्मल जी, आप फिल्म के लिए कहानी लिखेंगे?"

"हां, हा क्यों नही, लिखूगा ही नही बल्कि लिख चुका हूं, वही तो आज सेठ जी को सुनाने आया हूं."

"क्या नाम है आपकी कहानी का?"

"सुर्ख सवेरा."

"सुर्ख सवेरा? बड़ा अच्छा नाम है!...एक बात पूछूं, निर्मल जी, अगर आप बुरा न मानें?'

"हां, हां...पूछो भई."

"इस कहानी में मेरे जैसे लड़के के लिए कोई काम निकल सकता है?"

निर्मल ने अपनी दहकती हुई आंखें कुंदन के चेहरे पर गड़ा दी और कुंदन को ऐसा मालूम हुआ कि बागी अदीब की नजर उसके दिल और दिमाग के कोने-कोने को टटोल रही हैं. मिडिल के इम्तहान में जब वह शामिल हुआ था तब भी उसे इतनी घबराहट नही हुई थी.

"किसी फिल्म में काम किया है?" निर्मल ने यूं ही सवाल किया.

"जी, अभी तक...तो किसी ने चांस नही दिया..." कुंदन ने डरते-डरते इकरार किया.

"तो ठीक है, और किसी फिल्म में काम नही किया तो मेरी कहानी में जरूर काम कर सकते हो...मुझे काठ के पुतले और रंगीन तितलियां नही, इनसान चाहिए इनसान."

"तो फिर मुझे कौन-सा रोल मिल जायेगा?" और वह दिल ही दिल में दुआ माग रहा था, 'काश! मुझे किसी नौकर का नही बल्कि हीरो के दोस्त का रोल मिल जाये."

मगर निर्मल ने जो जवाब दिया उसके लिए कुदन बिल्कुल तैयार न था. "मेरे खयाल में मेरी कहानी के हीरो के लिए तुम्हारे जैसा ही लड़का चाहिए."

खुशी की एक सनसनाहट भरी लहर कुदन के तमाम बदन मे दौड़ गयी. क्या जिंदगी के सारे ख्वाब एक ही दिन में सच्चे हो सकते हैं? पहले मिस नाजनीन की मीठी-मीठी बातें और अब निर्मल जैसे मशहूर अदीब की ये नवाजिश!

अभी वह अपने नये खिदमतगार का शुक्रिया भी अदा नही कर पाया था कि सेठ जी की कार का हार्न सुनायी दिया. वह हड़बड़ा कर खड़ा हो गया. अब उसकी सारी उम्मीदों का दारोमदार सेठ जी की नजर-ए-इनायत पर ही था. सफेद रेशमी कोट (जिसमें सोने और हीरे के बटन लगे हुए थे), सफेद

धोती और काली टोपी पहने सेठ जी कार से उतरे. बरामदे की सीढ़ियों पर पान की पीक थूकी, और बग़ैर कुंदन या निर्मल की तरफ देखे सीधे अपने कमरे में चले गये. दफ्तर से दो-तीन गूजती हुई डकारें सुनायी दी और इसके बाद टेलीफोन की चर्खी घुमाने की गरगराहट. सेठ जी ने अपने निजी टेली-फोन पर अपने स्टाक ब्रोकर से सट्टे की बातचीत शुरू कर दी. कोई-कोई लफ्ज बाहर भी सुनायी देता था, '...तेजी...मंदी...खरीदो...बेचो...एक सौ उन्नीस...न्यूयार्क काटन...कवर करो कवर...!'

निर्मल ने कुंदन की तरफ देखा और कुंदन ने निर्मल की तरफ. बागी अदीब ने 'सुर्ख सवेरा' का पुलिंदा जो अपने थैले से आधा बाहर निकाल लिया था फिर अंदर ठूस दिया.

एक चपरासी बाहर आया तो कुंदन ने उसे रोक कर कहा, "देखो ये निर्मल जी बडे लेखक है. सेठ जी के बुलाने से आये है. इनका नाम तो अंदर पहुंचाओ."

चपरासी ने निर्मल पर ऊपर से नीचे तक परेशान बालों से लेकर पैवंद लगे हुए चप्पलों तक इस तरह तौहीन से नजर डाली जैसे कह रहा हो, 'बहुत देखे हैं ऐसे-ऐसे मुंशी."

"कार्ड है तुम्हारे पास?"

"कार्ड तो नही है..."

"हूं...! ये लो, नाम लिखो!"

निर्मल ने पर्ची पर नाम लिखकर चपरासी को दिया और फिर बेंच पर बैठ गया. चंद मिनट के बाद चपरासी आया और इस बार कम बदतमीजी से बोला, "बुलाते हैं सेठ जी."

निर्मल अंदर गया तो चपरासी ने कुंदन से पूछा, "तुमको क्या चाहिए?"

"मैं तो स्टूडियो का ही आदमी हूं, भई. लाइट डिपार्टमेंट मे काम करता हूं. रात सेठ जी ने सेट पर कहा था सवेरे हमे आफिस मे मिलो."

"हूं...लाइट कुली!" चपरासी ने इस तरह कहा जैसे किसी कीडे-मकोडे को एक भारी जूते तले दबा कर मसल दिया जाये और वह बीडी सुलगाता हुआ कैंटीन की तरफ चल दिया.

पर कुंदन ने इसकी परवाह न की बल्कि सोचकर मुस्कुराया, "कल इसी चपरासी को मुझे झुककर सलाम करना पड़ेगा. इस बेवकूफ को नही मालूम कि मैं इस कंपनी की अगली फिल्म का हीरो हूं हीरो."

अंदर कमरे में सेठ जी निर्मल से सवाल-जवाब कर रहे थे—

"हां, तो तुम्हारी स्टोरी का क्या नाम है, मुशी जी?"

"देखिए, मैं मुशी नही हूं."

"कोई बात नही...कोई बात नही. अपने यहा बड़ा-बडा मुशी काम कर चुका है. मुशी खंजर, मुशी मस्ताना, मुशी प्रेमी, मुशी परदेसी...हा तो क्या नाम है स्टोरी का?"

"सुर्ख सवेरा."

"सुर्ख बसेरा?"

"जी हां, 'सुर्ख सवेरा' मतलब है कि आजादी और इंकलाब की सुबह..."

सेठ साहब कुछ नही समझे. बात काटकर बोले—"नही नही...ये नही चलेगा. 'सुर्ख बसेरा' तो रेडियो सिगनल जैसा नाम है. कोई समझेगा हमने स्टंट पिक्चर बनाया है.'

"सेठ साहब! ये दूसरी किस्म का रेडियो सिगनल है. ये सुर्खी खून की सुर्खी है मजदूरो और किसानो का खून—खूनी शफक!"

सेठ साहब चमक कर बोले—"क्या कहा—'खूनी आशिक!' ये फिल्म तो हम दस बरस हुए बना चुका है. देखो मुशी जी..."

"मैंने आपसे कहा न कि मैं मुशी नही..."

"ठीक है, ठीक है, वह मुंशी खजर भी यही बोलता था. हां, तो तुमने न्यू थियेटर्स का 'हमराही' देखा है? पहले ये फिल्म बगाली मे उतारा था—नया हीरो, नया हीरोइन. न गाना, न डांस! सब बोलता—दो-चार वीक भी चले तो बहुत है. पर जानते हो कलकत्ता मे कितना चला?—साल भर! पूरे साल भर! अभी बांबे मे हिंदुस्तानी मे चलता है. हम भी देखने गया. बिल्कुल बड्ल है हीरो एकदम कलूटा देहाती दिखता है. बिल्कुल रोमांटिक नही. हीरोइन घोड़ी जैसी दिखती है. उससे तो अपनी शांता ज्यादा सुदर है गाना अपने मधोक बाबू जैसा एक भी नही, फिर भी क्या रश ले रहा है! जब दखो

हाउसफुल!...न जाने पब्लिक क्यों इतना ताली मारता है? हमारा डाइरेक्टर वासु बोलता है—इसमें सेठ लोगों और पैसेवालों को गाली दी है, सो पब्लिक ताली मारता है. सो अपने को भी ऐसी स्टोरी मांगता. हम भी सेठ है, पर तुम सेठ लोगो को जितनी चाहे गाली दो...हां, दस गाने जरूर मागता, और पिक्चर कम-से-कम सिलवर जुबिली होना चाहिए."

सेठ साहब की तकरीर सुनकर बेचारा कहानी लेखक लाजवाब ही नही, बल्कि ठंडा हो चुका था, डरते-डरते बोला—

"देखिए, मैं कहानी लिखते वक्त किसी की नकल नही करता. 'हमराही' मैंने देखी है. अच्छी खासी फिल्म है, मगर कुछ लिहाज से उसमे चंद बुनियादी कमजोरियां..."

"होगा...होगा," सेठ साहब ने जल्दी से बात काटते हुए कहा—"तुम अपनी स्टोरी ही लिखो. हम सुनता तुम सोशलिस्ट लेखक हो, सेठ लोगो को एकदम गाली देते हो."

"मैं गाली नहीं देता हूं, सेठ साहब, मैं समाज की हकीकत को बेनकाब करता हू..."

"और देखो, इतना कठिन डायलॉग नही चलेगा. अपने को ऐसा डायलॉग चाहिए जो कश्मीर से लेकर मद्रास तक सब एकदम समझ जायें."

"पहले कहानी तो सुन लीजिए, फिर डायलॉग की बात कीजिएगा."

सेठ साहब ने घड़ी तरफ देखा और खड़े हो गये—"देखो आज तो अपने को टाइम नहीं है, जरा मेयर बाजार जाना है, फिर किसी दिन सुनेगा. आज तुम डाइरेक्टर वासु को स्टोरी सुनाओ, जैसा वह बोले वैसा चेंज करके हमें सुनाना. बसो बसो तुमी बसो..." बेसाख्ता गुजराती बोलते हुए सेठ साहब कमरे से बाहर निकल आये. कुंदन जो इसी इंतजार मे बैठा हुआ था, सेठ साहब की तरफ लपका.

"सेठ जी, नमस्ते."

"नमस्ते, नमस्ते. क्या है?"

"आपने बुलाया था न. रात सेट पर आप बोले सवेरे हमे मिलो."

"अच्छा अच्छा, तुम वह साइटवाला छोकरा है. तुम अच्छा काम करता है..."

:—कुंदन का दिल खुशी-से उछलने लगा.

"लाइट कुली का काम अच्छा नही है, तुमको कोई अच्छा दूसरा काम देगा." सेठ ने कहा. कुंदन को हीरो बनने का ख्वाब सच्चा होता नजर न आया और फिर एक लम्हे में उम्मीदों के ऊंचे सुनहरे महल मिट्टी मे मिल गये.

"आज से तुम यहां काम करो—आफिस का एक सिपाही है इधर, पर अपने को एक अपना प्राइवेट चपरासी चाहिए..." और फिर जाते-जाते—"हां देखो, डाइरेक्टर बासु को बोलो, वह लेखक निर्मल जिसको हमने बुलाया था, इधर बैठा है, उसकी स्टोरी सुन लें" ये कहा और मोटर मे बैठकर सेठ जी चल दिये.

लाइट कुली से चपरासी! तो ये हुई उसकी तरक्की! फिर भी डाइरेक्टर के कमरे की तरफ जाते हुए रास्ते में कुदन ने सोचा—कम से कम, रोज सेठ और दूसरे डाइरेक्टरों के सामने आने का मौका तो मिलेगा? शायद किसी दिन किसी की नजर पड जाये और अपनी फिल्म के किसी रोल के लिए साइन कर लें.

डाइरेक्टर बासु, आराम कुर्सी पर लेटे एक अमेरिकन फिल्म मैगजीन पढ रहे थे. उनको स्टूडियो में सबसे ज्यादा पढा-लिखा और काबिल आदमी समझा जाता था. बी.ए. में पढते थे, जब घर से भागकर फिल्म लाइन मे आये थे. अमेरिकन और अंग्रेजी फिल्में बाकायदा देखते थे और 'रवेका' या 'गान विद द-विंड' जैसे नाविल भी पढ लेते थे, ताकि सनद रहे और वक्त जरूरत काम आये. टैगोर या शरतचंद्र चटर्जी की एक दो किताबें साथ रखते थे, ताकि उनकी लिटरेचर से दिलचस्पी का सिक्का सब पर बैठ जाये. हमेशा सिल्क का कुर्ता और मलमल-की धोती और ऊपर एक कश्मीरी शाल में नजर आते थे, ताकि लंबे बालो के साथ इस लिबास से भी फनकाराना माहौल बना रहे.

कुंदन ने सेठ साहब का पैगाम डाइरेक्टर बासु को पहुंचा दिया और

फिर एक प्याली चाय पीने के लिए कैंटीन की तरफ चला. होटल के सामने एक दरख्त के नीचे एक गोल चबूतरा बना हुआ था जिस पर अक्सर एक्स्ट्रा लड़कियां बैठी रहती थीं. कुदन आमतौर से उधर से कतराकर ही निकल जाता था. क्योंकि उसने सुना था कि ये लड़कियां बड़ी आवारा और बदमाश होती हैं. फिल्मों में काम मिलने की गरज से अपना जिस्म फरोख्त करती फिरती हैं और कितनी ही बीमारियों का शिकार होती हैं. इसके अलावा वह खुद हीरो बनने और शकुंतला या नाजनीन जैसी हीरोइन से इश्क करने के ख्वाब देख रहा था. वह असिस्टेंट कैमरामैनों और असिस्टेंट डाइरेक्टरों की तरह एक्स्ट्रा लड़कियों के चक्कर में पड़कर अपनी आइंदा तरक्की को क्यों खतरे में डालने लगा.

आज कैंटीन में भीड़ इतनी थी कि बैठने को एक कुर्सी भी न थी और फिर लाइट कुली कुदन के लिए भला कौन कुर्सी खाली करता. मजबूर होकर वह बाहर निकल आया और सोचा, चंद मिनट इंतजार करने के बाद जब कोई जगह खाली होगी तो फिर अंदर चला जायेगा. दरख्त के नीचे रोज की तरह चंद एक्स्ट्रा लड़कियां बैठी थीं. कुदन ने जानबूझ कर उधर पीठ कर ली और सेठ जी के दफ्तर की छत पर बैठे हुए कबूतरों को घूरने लगा. पर उसका जी चाहता था किसी बहाने से उधर निगाह डाल ले शायद इत्तफाक से कोई अच्छा चेहरा ही नजर आ जाये! कान उसके उधर ही लगे रहे.

दो लड़कियां बातें कर रही थीं—

"लो बावे टाकीज में काम नहीं चला?" ये आवाज चंचल, शोख और पंजाबी थी.

"नहीं, अगले हफ्ते फिर बुलाया है." ये आवाज धीमी और मायूस थी.

"ताज्जुब है कि तुम दादा गुजा के साथ गयी और तुम्हारा काम न बना!"

"जब उनको जरूरत ही न हो तो दादा क्या कर सकता है?"

"ये तो न कहो, जिस लड़की से उसका ताल्लुक हो जाये उसके लिए जान लड़ा देता है"

"मेरा उसका कोई ताल्लुक नहीं है..." ये अल्फाज भी उस नामालूम

लड़की की जबान से झिझकते-झिझकते हुए निकले और न जाने क्यों कुंदन को उस आवाज में वही मासूमियत, वही दया सुनाई दी जो सवेरे उस लड़की के चेहरे पर दिखाई देती थी, जो दादा गुंजा की मोटर के पास खड़ी थी.

चंचल और शोख लड़की हंसकर बोली—"बहन! अभी नयी हो, तभी ऐसी बातें करती हो!"

फिर थोड़ी देर खामोश—"कब तक इंतजार करना पड़ेगा?"

"कौन जानता है. सुबह से शाम हो जाती है और डाइरेक्टर साहब को एक्स्ट्रा लड़कियों का चुनाव करने की फ़ुरसत नहीं मिलती."

"भूख लगी है—बस सुबह एक प्याली चाय पी थी."

"मुझे खुद भूख लगी है, पर पता नहीं पैसे भी हैं या नहीं, यहां तो एक टोस्ट भी एक रुपये का मिलता है."

फिर बटुओं से पैसे निकालने और गिनने की आवाज और इस बार कुंदन ने महसूस किया कि चंचल और शोख आवाज उतनी चंचल और शोख नहीं थी.

"मेरे पास तो बस दो रुपये है. ट्रेन में भी गयी तो घर पहुंचने के लिए एक रुपया चाहिये."

"तो कोई बात नहीं—एक-एक आमलेट खा लेते है."···और फिर आवाज का निशाना कुंदन की तरफ.

"ऐ मिस्टर?"

अब तो कुंदन को मुड़कर देखना ही पड़ा. चंचल और शोख आवाजवाली, जिसने उसे पुकारा था, खासी अच्छी सूरत मगर छोटी आंखोवाली निकली. उसने मेकअप, बालों के सिंगार, साड़ी बांधने के अंदाज और गर्दन के खम से शांता से मिलान पैदा करने की कोशिश की थी. उसकी साथवाली वही लड़की थी जिसे कुंदन ने सुबह अपने कमरे की खिड़की से देखा था. करीब से वह और भी भली नजर आयी. और बावजूद ये कि उसके चेहरे पर न पेंट या पाउडर था, न कोई जेवर, साड़ी भी मामूली सूती, घर की धुली हुई, फिर भी उसका मासूम और कुदरती हुस्न निहायत दिलकश था.

कुंदन को याद आया कि एक्स्ट्रा लड़कियां नौजवानों के फांसने के रोज

नये तरीके अख्तियार करती हैं. इसलिए उसने काफी समय से जवाब दिया.

"क्यों, क्या है?"

नकली शांता ने बनावटी नाज और अंदाज से मुंह बनाकर कहा—"अजी सरकार, इतने बिगड़ते क्यों हैं? आपसे बस इतना पूछना है कि इस कैंटीन में आमलेट कितने का मिलता है?"

"मैं क्या होटल का छोकरा हूं?" कुदन ने अपनी सफेद कमीज और पतलून को जताते हुए सख्ती से कहा और फिर गड़बड़ा कर—"डेढ़ रुपये का मिलता है."

कुदन ने फिर मुंह फेर लिया. दोनों लड़कियों में आमलेट के मसले पर बातचीत शुरू हो गयी. तय यह हुआ कि दोनों मिलकर एक आमलेट ही मंगा-कर खा लें और कमी पूरा करने के लिए दोनों बस के बजाय ट्रेन में घर वापस जायें. होटल के छोकरे को आर्डर दिया गया.

"क्यों बहन! तुम्हारा नाम क्या है?" शोख और चंचल ने पूछा.

"इंदिरा—और तुम्हारा?"

"मां-बाप तो कम्मो-कम्मो पुकारते थे पर अब मैं कविता कुमारी कह-लाती हूं."

'इंदिरा! अच्छा शरीफाना नाम है' कुदन ने सोचा—'अच्छी भली लड़की मालूम होती है. इससे मुलाकात बढ़ायी जाये तो कैसा रहे? मगर स्टूडियो वाले तो यही कहेंगे कि एक एक्स्ट्रा लड़की को फांस...'

अभी वह ये सोच ही रहा था कि सेठ के कमरे की तरफ से टेलीफोन की घंटी बजने की आवाज आयी और कुदन बेतहाशा भागा. 'ये जरूर नाजनीन का फोन होगा.'

मगर उसका खयाल गलत निकला. ये तो मगनलाल डूंसवाला की दूकान से प्रोडक्शन मैनेजर के लिए पैगाम आया था कि दस नाचने वालियों के घघरे सिल कर तैयार हो गये हैं. मगर चोलियां कैसे सिल सकती हैं, जब तक सब एक्स्ट्रा लड़कियां अपना नाप देने खुद न आयें.

कुदन ने ये पैगाम प्रोडक्शन मैनेजर को पहुंचा दिया जो बैठा हुआ लड़-कियों की तस्वीरों की गड्डी से ताश की तरह खेल रहा था. वह बोला—

"लड़कियों को नाप देने के लिए कहां से भेज दूं. अभी तक उनका चुनाव ही नहीं हुआ. आज ढंग की सूरत-शक्ल की लडकियां कहां मिलती हैं? और फिर डास के वास्ते बदन भी तो चाहिए, यहां जिसे देखो सूखा चुसा हुआ आम या मोटी भैंस...कह दो अपनी मर्जी से जिस नाप की चाहें बना दें. बाद में ठीक करवा लेंगे. और कुछ नही तो रूई भर देंगे."

कुदन ने जाते-जाते ये बात प्रोडक्शन मैनेजर के कान मे डाल दी.

"अच्छी सूरत-शक्ल की लडकियां चाहिये तो दोनों आपके दफ्तर के बाहर बैठी है."

मगनलाल ड्रेसवाले को जवाब देकर फोन बंद ही किया था कि घंटी फिर बजने लगी.

"ग्रेट आर्ट पिक्चर्स—कौन चाहिए आपको?"

"देखो मिस नाजनीन से कह दो कि उनकी सहेली कमला ने उन्हें शूटिंग के बाद छः बजे चाय पर बुलाया है ताजमहल होटल मे. भूल न जायें."

"बहुत अच्छा—मैं अभी कह देता हूं."

"और सुनो—ये बात जरा उनसे अलग मे कहना. उनकी मा या नानी के सामने नहीं."

इससे पहले कि कुदन सवाल कर सकता कि मिस नाजनीन की सहेली छुपाकर दावत क्यों कर रही है, फोन कट गया और दिल-ही-दिल में इस मसले पर गौर करता हुआ वह स्टूडियो की तरफ गया, जहां डाइरेक्टर हाडा की फिल्म "तितली' की शूटिंग हो रही थी.

"रिहर्सल!" डाइरेक्टर रामप्रसाद हाडा पंजाब का रहने वाला था और उसकी आवाज में पठानी किस्म का रोबदाब था.

नाजनीन का क्लोजअप लिया जाने वाला था. दर्जनों रोशनियों के झुरमुट में खड़ी कैमरे की आंखों में आंखें डालकर वह कह रही थी—"मैं तुम्हारे प्रेम के लिए दुनिया की हर चीज बलिदान कर सकती हूं—धन-दौलत, मा-बाप, घर बार."

और नाजनीन की नानी चुनिया बाई दूर कुर्सी पर बैठी, पान चबाते हुए मुंशी परदेसी (जो फिल्मी डायलॉग राइटर बनने से पहले दर्जी का काम करते थे) से कह रही थी, "वाह मुंशी जी! क्या डायलॉग लिखा है. बस तबियत फड़क जावे है सुन के."

"ओ.के. फार साउंड..."

"मेकअप."

नाजनीन का मेकअप दुरुस्त हो रहा था. जब उसने देखा कि कुंदन उससे कुछ कहने का इतजार कर रहा है, उसने मेकअप वाले से कहा—"जरा ड्रेसिंग रूम से मेरा बैग तो उठा लाना." हालांकि बैग तो वहीं स्टूडियो मे उसकी मा के पास था. जैसे ही मेकअप वाला टला नाजनीन ने हल्की आवाज मे कुदन से पूछा—"क्यों, कोई फोन आया है?"

"जी हां, आपकी सहेली कमला ने छह बजे आपको चाय पर बुलाया है. ताजमहल होटल में! ताकीद की है कि भूल न जाएं!"

"छह बजे!" और कुदन ने नाजनीन के चेहरे पर ऐसे आसार देखे जैसे वह दिल ही दिल मे कोई हिसाब लगा रही हो, या शायद कोई फैसला कर रही हो फिर वह बोली—"शाबाश! किसी और से जिक्र मत करना."

अभी कुदन जवाब मे कुछ कहने वाला ही था कि उसकी जान भी चली जाये तो मिस नाजनीन का कोई राज उसकी जबान से नही निकल सकता कि मेकअप वाला वापस आ गया—"अजी वहा तो आपका बैग नही मिला..." कुंदन वापस चला आया.

सेठ साहब के कमरे में झाक कर देखा तो निर्मल अपनी कहानी पढ रहा था और डाइरेक्टर बासु ऊंघते अंदाज मे 'हा-हूं...यह...नाट बैड.' वगैरह कहते जा रहे थे.

निर्मल एक सीन सुना रहा था—

कलुआ गरीब है, मगर वह भीख नही मांगता. वह चोरी भी नही करता. वह अपना हक मांगता है. मजदूरो को जमा करके वह कहता है—'भाइयो! हम अपने खून-पसीने से...'

यह इतना ही सुन पाया था कि फोन की घंटी फिर बजी और वह उधर भागा. ये वही मिस नाजनीन की मर्दाना आवाज वाली सहेली कमला थी. "क्यों, मिस नाजनीन से कह दिया न?"

कुंदन ने इत्मिनान दिलाया कि पैगाम पहुंचा दिया गया है. "किसी और के सामने तो नहीं कहा?" न जाने ये मर्दाना सहेली नाजनीन की दावत इतने खुफिया तरीके से क्यों कर रही थी! खैर कुंदन को तो इससे क्या गर्ज उसने फिर यकीन दिलाया, "नहीं जी, मैं इतना बेवकूफ थोड़ा ही हूं, बिल्कुल अकेले में कहा है, किसी को कानोंकान खबर नही."

फिर वह मर्दाना आवाज वाली कमला का जवाब सुनकर दंग रह गया —"तो फिर जियो मेरी जान!" और फोन का सिलसिला कट गया.

प्रोडक्शन मैनेजर के कमरे से एक नरम सी, पहचानी हुई सी आवाज आयी. कुंदन ने उधर झांका तो देखा कि वही मासूम आंखो वाली इंदिरा है. वह कह रही थी—"आप सोच लीजिए, काम करने को मै तैयार हू मगर मुझे तजुर्बा बिलकुल नही है और नाचना तो मुझे जरा भी नही आता..."

और प्रोडक्शन मैनेजर कह रहा था—"आप क्या बात करती हैं, मिस इंदिरा. आप तो बहुत जल्दी हीरोइन हो सकती हैं. मुमकिन है अगली ही पिक्चर मे सिर्फ..." और यह कहकर वह ठहरा. गंदे अंदाज से इंदिरा की तरफ देखा और फिर बोला—"सिर्फ जरा मेहनत की जरूरत होगी.,'

"मेहनत तो मैं जितनी कहिए उतनी करने को तैयार हू." वह मेहनत का मतलब न समझते हुए बोली—"चाहे दस बार रिहर्सल करा लीजिए. डायलॉग तो चंद मिनट में याद करके सुना सकती हूं..."

प्रोडक्शन मैनेजर ने निहायत थकी हुई आवाज मे कहा—"अच्छा तो जाओ, कल मिलना."

इंदिरा बाहर निकली तो कुंदन से तकरीबन टक्कर होते-होते बची. शायद उसे वह आमलेट वाली बात और कुदन की बौखलाहट याद आ गयी. वह मुस्कुरा दी.

कुंदन को बात करने की हिम्मत हुई—"कहिये कान्ट्रेक्ट हो गया

आपका?" "नहीं, अभी कांट्रेक्ट की तो कोई बात नहीं हुई मगर प्रोडक्शन मैनेजर साहब ने उम्मीद बहुत दिलायी है. कहते हैं शायद अगली पिक्चर में मुझे हीरोइन का काम मिल जाये." और पहली बार कुंदन ने उस गमगीन आंखों में उम्मीद की झलक देखी और उसका जी न चाहा कि उससे बता दे कि प्रोडक्शन मैनेजर लगभग यही बात कर रोज किसी न किसी एक्स्ट्रा लड़की को अपने जाल मे फंसाने के लिए उससे कहा करता है, शायद इस-लिए कि इस बात से इंदिरा की उम्मीद की झलक भी खत्म हो जाती. उसने सिर्फ इतना कहा—"भगवान करे ऐसा ही हो."

स्टूडियो की घंटी देर तक बजी काम खत्म छुट्टी. अब नाजनीन निकलेगी शायद उससे कोई बात करे. कुंदन एक्स्ट्रा लड़की को छोड़ हीरोइन की जबान से दो लफ्ज सुनने की आरजू मे स्टूडियो की तरफ भागा. नाजनीन की मा और नानी डाइरेक्टर हांडा को घेरे खडी थी और पब्लिसिटी मैनेजर की हजामत अब तक हो रही थी..नाजनीन अपना बैग लटकाये, ड्रेसिंग रूम में दाखिल हुआ चाहती थी कि कुंदन पहुंच गया.

"कोई और काम तो नहीं है आपको?" उसने हकला कर पूछा. काश, इस वक्त वह कहे कि आसमान के तारे लाओ! अगर वह कहे कि मेरे जूते पर से धूल साफ करो तो वह भी अपनी खुशकिस्मती समझता.

आरजुओं के आसमान से जमीन पर

"तू बड़ा समझदार छोकरा है." नाजनीन ने कहा और गोया कुंदन अपने आपको छोकरा नही पूरा आदमी समझता था. मगर वह अपनी तारीफ सुनकर फूला न समाया अब उसे यकीन हो चला कि नाजनीन उसे अपना दोस्त और हमराज समझती है

मगर अगले लम्हे वह आरजुओ के आसमान से हकीकत की जमीन पर आ गिरा. धमाके के साथ, बल्कि झंकार के साथ. उन कागज के रुपयो की झंकार के साथ जो नाजनीन ने उसकी तरफ ऐसा फेंका, जैसे कुत्ते को रोटी का टुकड़ा फेंकते हैं,

एक कुली को इनाम देकर वह अंदर चली गयी और कुंदन —लाजवाब

और गूंगा होकर कई मिनट तक जमीन पर पड़े हुए उन कागजों के नोटों को देखता रहा. जैसे वे नोट उसको मुंह चिढ़ा रहे थे.

अगले दिन कुंदन स्टूडियो पहुंचा तो गर्मागर्म खबरें मिलीं. निर्मलकुमार की कहानी 'सुर्ख सवेरा' पांच हजार में खरीद ली गयी और अब वह डाइरेक्टर बामु के साथ मिलकर स्क्रीन प्ले और डायलॉग लिखने वाला था. अब तो शायद सचमुच कुंदन को हीरो बनने का मौका मिल जाय! मगर दूसरी खबर उससे कहीं ज्यादा सनसनीदार थी.

और नाजनीन भाग गई !

नाजनीन की मां ने सेठ जी को फोन किया था. सेठ जी ने घर में वावेला मचाया था. सेठ जी के ड्राइवर ने प्रोडक्शन मैनेजर को खबर पहुचायी थी. प्रोडक्शन मैनेजर ने डाइरेक्टर हाडा से कहा था कि आज इस वजह से शूटिंग नहीं होगी. डाइरेक्टर हाडा ने अपने दो असिस्टेंट डाइरेक्टरों—राम और चोपड़ा से कहा था कि कानोकान किसी को खबर न होने पाये—चोपड़ा ने मेकअप वाले को राजदार बनाया था. मेकअप वाले ने एक एक्स्ट्रा लड़की को जिससे उसकी आशनाई थी. उस लड़की ने चार दूसरी एक्स्ट्रा लड़कियों के कानों में यह बात फुसफुसाई थी. मतलब यह कि चंद ही घंटे में, न सिर्फ 'ग्रेट आर्ट पिक्चर' बल्कि रजीत, श्री साउंड, रूपतारा, और दादर के हर स्टूडियो में यह खबर मशहूर हो गई थी कि नाजनीन भाग गयी है.

नाजनीन भाग गयी है!

नाजनीन भाग गयी है!!

मगर इसके साथ? किसी का कहना था कि हैदराबाद के किसी जागीरदार के बेटे के साथ, किसी का कहना था कि अपने ड्राइवर के साथ. कोई एक मशहूर फिल्मी हीरो का नाम लेता था, कोई एक मुकामी लीडर को जिम्मेदार ठहराता था. जितने मुंह उतनी बातें. तमाम स्टूडियो में खलबली मची हुई थी, दबी हुई आवाज में.

मर्दाना आवाज वाली सहेली कमला. ताजमहल होटल, शाम के छह बजे, उफ! उसने अपने हाथ से पैर पर कुल्हाड़ी मारी थी और कुंदन को ऐसा

मालूम हुआ जैसे उसके साथ दगा की गयी हो. उसके जज्बात को मिट्टी... नही नही, कीचड में मसल दिया गया हो, जैसे...जैसे हीरोइन हीरो को छोड़ कर बदमाश विलन के साथ भाग गयी हो. उफ्! बेवफा दुनिया! उफ्! दगाबाज औरत!...वगैरह वगैरह तमाम फिल्मी डायलॉग उसके दिमाग में आते रहे.

मगर थोड़ी देर के बाद उसने सोचा, मुमकिन है उसकी रूमानी फिल्म की हीरोइन नाजनीन न हो, कोई और हो और नाजनीन सिर्फ 'साइड हीरोइन' या मुमकिन है वह सिर्फ एक्स्ट्रा ही हो! तो फिर उसकी हीरोइन कौन है?

"मैंने कहा नमस्ते, कुदन जी!"

ये इंदिरा थी. वह खामोश और हयादार आंखों वाली इंदिरा! नही नही, यह घर की धुली हुई सूती साड़ी पहनने वाली एक्स्ट्रा लड़की कुदनकुमार (होने वाले फिल्म स्टार) की हीरोइन कैसे हो सकती है? उसने जवाब में सूखा-सा 'नमस्ते जी नमस्ते' कह कर टालना चाहा.

"कहिये, आज भी प्रोडक्शन मैनेजर साहब के दर्शन हो सकेंगे या नही?"

लो ये तो पीछे ही पड़ गयी. यही तो इन एक्स्ट्रा लड़कियों की हरकतें है जिनसे वह अपना शिकार फांसती हैं.

"आज तुम्हें स्टूडियो में किसी से मिलने का मौका नही मिलेगा. सब परेशान हैं."

मामला प्राइवेट है !

"क्यो, क्या हुआ कुदन जी?"

कुदन जी! कुदन जी! कम्बख्त उस बेचारे के पीछे क्यों पड़ गयी थी? मगर उसकी आवाज में इतनी मासूमियत थी कि कुंदन किसी दुरुस्त जुम्ले से गुफ्तगू के सिलसिले को न काट सका.

"किसी से कहिएगा नही, मामला बड़ा प्राइवेट है..." और यह कह कर नाजनीन के भाग जाने का वाकया सुना दिया.

"इतनी बड़ी और मशहूर एक्ट्रेस भाग गयी और कोई नही जानता किसके साथ? कितने ताज्जुब की बात है!"

अब कुदन को अपनी अहमियत जताने का मौका हाथ आया. "कोई नही जानता सिवाय एक आदमी के."

"वह कौन?"

"वह मैं?"

और फिर राजदाराना अंदाज में उसने टेलीफोन का वाकया सुना डाला. मर्दाना आवाज वाली सहेली मिस कमला...ताजमहल होटल मे चाय की दावत वगैरह और ये सुन कर इंदिरा—मासूम आखो वाली इंदिरा, हंस दी खिलखिला कर, जैसे नाजनीन का भाग जाना एक ट्रेजडी नही बल्कि कामेडी है.

"सब परेशान है और तुम हंस रही हो?" उसने ताज्जुब से पूछा.

"माफ करना कुदन जी मैं मिस नाजनीन की मा और नानी का खयाल करके हंस रही थी. कितनी मेहनत से उन्होने इस सोना बनाने वाली मशीन को तैयार किया था. वह मशीन एक आदमी के साथ भाग गयी.'

और पोपली चुनिया बाई का खयाल करके कुदन भी हंस पड़ा. मा और नानी दोनो की बुरी हालत होगी. नाजनीन भाग गयी तो इन दूसरो को कौन पूछेगा? फाको की नौबत आ जायेगी! कुंदन को इन दोनो जहरीली शहद की मक्खियो से कोई हमदर्दी नही थी मगर फिर भी वह नाजनीन की इस बेहूदा हरकत को माफ करने के लिए तैयार नही था वह कहता रहा था, "फिर भी उसे मां, नानी, स्टूडियो और पिक्चर सबको छोड कर इस तरह नही भागना चाहिए था."

"कुदन जी!" इंदिरा बोली और पहली बार उसकी मासूम और मीठी आवाज में जहर की हल्की-सी तल्खी थी, "औरत की जिंदगी में मा, नानी, स्टूडियो और पिक्चर से बढकर भी एक चीज होती है—वह है मोहब्बत."

फोन की घंटी बजी और वह उधर भागा.

"ग्रेट आर्ट पिक्चर्स...आपको कौन चाहिए?"

वह ग्रामोफोन के रेकार्ड की तरह मैकेनिकल तरीके से जवाब देता रहा मगर उसके दिमाग मे इंदिरा के अल्फाज गूंज रहे थे.

"सेठ साहब स्टूडियो में नही हैं, घर फोन कीजिए."

"क्या कहा? नंबर?...मगर नंबर नहीं दिया जा सकता, प्राइवेट है."

"आप 'फिल्मी हिंदुस्तान' के एडीटर हैं. अगर लाट साहब भी हों तो सेठ साहब का प्राइवेट नंबर नहीं दे सकते, हमें कोई जानकारी नहीं है कि मिस नाजनीन भाग गयी हैं."

"फिर फोन की घंटी बजी.

'नहीं, मिस नाजनीन शूटिंग को आज नहीं आयी हैं."

"जी नहीं. उनके घर का नंबर भी नहीं दे सकता, बहुत अफसोस है! और कोई बात पूछिए."

"उनकी मां का नाम? नहीं मालूम, सब उन्हें नाजनीन की अम्मा कहते हैं. नानी का नाम चुनिया जान. जिस पिक्चर में काम कर रही है उसका नाम है 'तितली'...मगर सुनिए, औरत की जिंदगी में मां, नानी, स्टूडियो और पिक्चर से बढ़कर भी एक चीज होती है! वह क्या होती है? ये आप खुद सोचिए."

फोन का चोंगा उठाकर अलग रख दिया ताकि घंटी न बज सके. मालूम होता था कि तमाम बंबई के अखबारों के एडीटरों को ऐसे वक्त सिर्फ मिस नाजनीन की खैरियत की फिक्र पड़ी हुई थी.

"आप तो फिलासफर मालूम होती हैं." कुंदन ने फिर इंदिरा की तरफ मुखातिब होते हुए कहा, "जिंदगी सब कुछ बना देती है."

अब तो कुंदन को इस अजीब मासूम शक्ल और फिलासफर दिमाग वाली एक्स्ट्रा लड़की में दिलचस्पी बढ़ती जा रही थी. जब से होश संभाला था ये पहली लड़की थी जिसने उससे सीधे मुंह बात की थी. पिछली शाम का खयाल करके उसके कान लाल हो गये. "छोकरा!" क्या नाजनीन उसे किसी और लफ्ज से मुखातिब नहीं कर सकती थी? खैर लानत भेजो नाजनीन पर. मगर जीस नहीं नसीब तो सूनी माड़ी ही पर क्यों न तसल्ली की जाये, खासकर जब वह इतनी अच्छी धुली हुई हो!"

"सुनिये एक बात कहूं अगर आप बुरा न मानें."

"कहिये."

"आज स्टूडियो में तो कोई आने वाला नहीं है, सब शिकारी कुत्तों की

रह भागे फिर रहे हैं."
"मगर इसमें मेरे बुरा मानने की क्या बात है?"
"वह बात तो मैंने अभी कही ही नहीं. आज यहां काम-वाम तो कुछ ोगा ही नहीं, इसलिए हम...मेरा मतलब है आप मेरे साथ सिनेमा चलेंगी?"
"चलो चलूंगी मगर एक शर्त पर. आप मुझे मेरे घर छोड़कर आयेंगे?"
"बड़ी खुशी से."

इस फिल्मी सिचुएशन का कुंदन कितनी मुद्दत से अभ्यास कर रहा था. ीरो, हीरोइन को दावत देता है, वह मंजूर कर लेती है. वे दोनों जाकर ताज खते हैं, वे कश्ती में बैठकर समुद्र की सैर करते है. हवा से हीरोइन के बाल उड़ रहे हैं. और उसके गोरे चेहरे के गिर्द हाला किये हुए है. उसकी रेशमी ाड़ी का आंचल हवा में एक इंकलाबी परचम की तरह उड रहा है. हीरो अपनी तेज रफ्तार मोटर मे बिठा कर हीरोइन को जुहू ले जाता है. नारियल के ऊंचे दरख्त चांदनी रात में सितारों से सरगोशियां करते हुए, फिजा मे एक ोमानी नशा—मैं और तू—तू और मैं...वगैरा वगैरा.

अचानक दिमाग की फिल्म गोया तडाक से टूट गयी. जब उसने जेब में डाल कर और टटोल कर हिसाब लगाया कि उसके पास सिर्फ दस रुपये थे. उसमें तो सिनेमा भी चार रुपये वाले टिकटों मे देखना पड़ेगा. खैर कोई पर-वाह नहीं. हीरो गरीब है, फिर भी हीरोइन को एक बड़े रेस्टोरेंट मे ले जाता है, हीरोइन को मालूम है कि उसके पास दाम नहीं है, इसलिए बैरे के बिल लाने से पहले वे अपने प्लास्टिक के बैग मे एक सौ रुपये का नोट निकाल कर हीरो की जेब मे चुपके से डाल देती है.

अमीर हीरो, गरीब हीरोइन.
गरीब हीरो, अमीर हीरोइन.
मगर यहां तो वे दोनों गरीब थे. सिचुएशन फिल्मी ढर्रे पर न चल सकी.
"आइये तो पहले कहीं चाय ही लें."
ईरानी की दूकान, किनारे टूटी हुई प्यालियां—'गवर्नमेंट का दूध' यानी पाउडर की चाय—चारों तरफ मैले-मैले कपड़े मैले-मैले चेहरे, सभी उन दोनों को घूरते हुए.

"आपको चने पसंद है?"

"जी हां, केक पेस्ट्री कुछ नहीं है खस्ता भुने हुए चनों के सामने."

"पचास पैसे के चने देना."

"दादर से लेमिंग्टन रोड कैसे जाया जाये?"

"कहिये बस से चलें या लोकल ट्रेन से?"

"लोकल ही से चलिये. अभी तो पिक्चर शुरू होने में बहुत देर है."

ट्रेन. तमाम शहर पीछे भागा जा रहा है. सिनेमा के मजेदार तमाशा और कोई दिलचस्प हस्ती साथ हो तो चने चबाना भी एक रूमानी अंदाज हो जाता है!

हंसते बातें करते (निहायत गैर फिल्मी और गैर रूमानी किस्म की बातें —मसलन ये कि हमारे करनाल में तो दस पैसे में इससे दुगने चने मिलते थे या ये कि राशन की दूकान से चावल और गेहूं किस भाव मिलते हैं?) वे लेमिंग्टन रोड पहुंचे.

"कौन-सी फिल्म देखें?"

"कोई सी भी. मुझे फिल्मों से कोई खास दिलचस्पी नहीं है."

"फिर भी आप फिल्मों में काम करना चाहती हैं?"

"पेट जो पालना है."

"आप तो फिलासफर मालूम होती हैं."

"ये आप पहले भी कह चुके हैं."

"खैर चलिये 'कल्पना' देखें."

"चलिये, मैंने उदयशंकर की बहुत तारीफ सुनी है."

चार रुपये के टिकट खत्म, छह रुपये वाले टिकट भी खत्म. सिर्फ ड्रेस सर्किल वाले टिकट मिल सकते है."

ब्लैक मार्केटी स्टाल का टिकट दस रुपये में. बालकनी का एक टिकट बीस रुपये में! और कुंदन की जेब में सिर्फ छह रुपये में.

"छोड़िये फिर किसी दिन देख लेंगे."

"मालाबार हिल, हैंगिंग गार्डेन देखने चलती है आप? सैर ही हो जायेगी." उसने झेंप मिटाने के लिये कहा.

"चलिये. बजाये सिनेमा सिनेमा हाल की जहरीली सांसों के समुद्र की ताजा हवा खायें."

कितनी समझदार थी ये लड़की! कोई दूसरी होती तो पिक्चर न देखने पर नाक-भौं चढाती और न जाने कितने नखरे करती.

रिज रोड के घने सायेदार दरख्तों की छांव में पैदल चलते हुए वे हैंगिंग गार्डेन पहुंचे, पश्चिमी किनारे पर खड़े होकर डूबते सूरज का मंजर देखा.

माहौल इस कदर दिल फरेब था कि कई मिनट तक दोनों चुपचाप खड़े समुद्र की ओर देखते रहे और कुंदन को मालूम हुआ कि कभी-कभी खामोशी भी बामाने होती है.

वापसी पर अंधेरा हो गया और सड़क की रोशनियां चमक उठीं.

"अब आपको मुझे घर छोड़ कर आना होगा."

"कहां रहती है आप?"

"बोरी बंदर के करीब."

कुंदन ने सोचा, वह तो बढ़िया इलाका है, शायद किसी अच्छे फ्लैट में रहती होगी. कुंदन ने अपने गालों को तमतमाता हुआ पाया, अपने तमाम बदन में एक सनसनी-सी महसूस की. जिस घडी का उसे कई बरस से इंतजार था, आरजू थी, वह आ पहुंची थी.

नाजनीन वापस आ गयी है. अपने आशिक के साथ जुहू के एक होटल में पकड़ी गयी.

नाजनीन वापस आ गयी है. सुना है शादी कर ली थी.

नाजनीन वापस आ गयी. और भी कोई नहीं मिला था—एक फौजी लेफ्टीनेंट के साथ...

नाजनीन वापस आ गयी. उसकी नानी चुटिया पकड़कर ले आयी.

नाजनीन वापस आ गयी. सुना है उसकी मां ने बहुत मारा.

नाजनीन वापस आ गयी. लेफ्टीनेंट इसहाक ने नाजनीन की मा से पच्चीस हजार रुपये लेकर तलाक दे दी.

नाजनीन वापस आ गयी. मां और नानी ने उस पर पहरा लगा रखा है.

नाजनीन वापस आ गयी. सेठ साहब ने उसे डाइरेक्टर बासु की फिल्म 'सुर्ख सवेरा' के लिये साइन किया है.

नाजनीन वापस आ गयी.! नाजनीन वापस आ गयी!! नाजनीन वापस आ गयी!!!

कुंदन दिल-ही-दिल में नाजनीन से खफा था. उसने तय कर लिया कि मैं उसकी तरफ देखूगा भी नही. जाये अपने लेफ्टीनेंट के पास, वही मर्दाना आवाज वाली 'कमला', जिसने पच्चीस हजार के बदले अपनी मोहब्बत को, नाजनीन को बेच डाला!

जब नाजनीन की पीली मर्सिडीज स्टूडियो के अहाते में दाखिल हुई तो कुंदन बरामदे में खडा इंदिरा का इंतजार कर रहा था जो अब तक नहीं आयी थी. हर शख्स की निगाहें नाजनीन के स्वागत को उधर घूम गयीं. आज वह एक फिल्म स्टार ही नही बल्कि जिंदगी के एक असली ड्रामे की हीरोइन बन कर आ रही थी—घर से फरार—शादी—तलाक—मां और नानी की मार—रुसवाई! आज वह इन तमाम मंजिलो से गुजर कर आ रही थी. कुंदन ने देखा कि उसका चेहरा पीला पड गया है, आंखें सूजी हुई है.

सेठ साहब की घंटी बजी और कुंदन अंदर गया. उसका खयाल था कि शायद डांट पडेगी मगर सेठ सोनामल चांदीवाले ने कुंदन की तरफ इस तरह देखा गोया वह नाली के कीडे से ज्यादा अहमियत नही रखता. "डाइरेक्टर बासु को यहा भेजो और चुनिया बाई और मुन्नी जान को बुलाओ."

कुंदन समझ गया कि आज 'सुर्ख सवेरा' के कंट्रैक्ट की बातचीत होने वाली है. डाइरेक्टर बासु को सेठ जी का पैगाम पहुंचा कर वह नाजनीन के ड्रेसिग रूम पहुचा और दोनो बुढियो को ये संदेश सुनाया कि सेठ जी उनका इंतजार कर रहे है, जिसे सुनकर खुशी से उनकी बाछें खिल गयीं. दरियाई घोडो की तरह उन्होने मोटे चर्बी चढे हुए जिस्मो को निहायत मुश्किल से गद्देदार कुर्सियों पर से उठाया और सेठ जी के दफ्तर की तरफ रवाना हो गयीं. नाजनीन दीवार पर लगे हुए आइने की तरफ मुह किये हुए बैठी थी.

न जाने कुदन को ये कैसे महसूस हुआ कि वह उससे कुछ कहना चाहती है. इसलिए वह चंद कदम जा कर लौट आया.

"आप मुझसे कुछ कहना चाहती है?"

"हां! मेरे पांव में चोट हो गयी है, टिंचर आयोडीन चाहिए. जरा मेहरबानी करके मुझे दफ्तर से 'फर्स्ट एड बाक्स' ला दीजिए."

कुंदन भाग कर 'फर्स्ट एड बाक्स' ले आया. न जाने क्यों नाजनीन का उदास, पीला चेहरा देखकर उसका दिल हमदर्दी और राहत से भर आया था. बेचारी! मोहब्बत की पहली ही मंजिल मे ठोकर खा आयी उसने कहा— "कहिए तो मैं दवा लगा कर पट्टी बाध दू?"

"नही, मैं खुद लगा लूगी, शुक्रिया!"

सेठ जी चुनिया बाई से कंट्रैक्ट की शर्तों पर बहस कर रहे थे, "साठ हजार! चुनिया बाई हमसे ऐसी बातें करती हो. अभी 'तितली' मे चालीस हजार पर काम कर चुकी हो उसके बाद ये सब बदनामी. सब पेपर्स मे कितना बुरा निकला है. मैं तो सोचता था न लू, फिर सोचा अपनी पुरानी स्टार है फिर आप लोगो से भी पुराना संबंध है. 'तितली' वाली रकम ही सही, उससे ज्यादा तो..."

"अब तो उससे ज्यादा ही देना पड़ेगा, सेठ साहब. जिसे आप बदनामी कहते है, ये तो पब्लिसिटी है. क्या समझे? सारे मुल्क का कोई ऐसा अखबार नही है जिसमे पिछले दस दिन मे नाजनीन का नाम न छपा हो."

"मगर बदनामी...!" सेठ ने चुनिया बाई के अल्फाज के बहाव को रोकने की नाकाम कोशिश की.

"बदनाम अगर होगे तो क्या नाम न होगा?" मुन्नी जान ने लुकमा दिया.

"पचपन हजार से तो हम एक कौड़ी कम न लेंगे. कल ही चंदूलाल शाह का टेलीफोन...!"

"अच्छा, चलो तुम्हारी खातिर पचास किये देता हूं मैं," सेठ ने जल्दी से कहा.

और ठंडी सांस भरते हुए चुनिया बाई बोली, "खैर तुम्हारा पिक्चर है

सो मंजूर किये लेते हैं, मगर टैक्स तुम्हें ही भरना पड़ेगा."

"वह तो मैं हमेशा ही भरता हूं. अच्छा, बुलाओ नाजनीन को, कंट्रैक्ट साइन हो जाये;"

"ड्रेसिंग रूम में है. किसी को भेज दो."

घंटी. "कुदन! मिस नाजनीन को बुलाओ."

कुदन ड्रेसिंग रूम में पहुंचा तो अंदर से किवाड़ बंद पाये. खटखटाया. कोई जवाब नहीं, फिर खटखटाया—धड़धड़ाया और कई आदमी जमा हो गये.

आखिर नाजनीन को क्या हुआ कि दरवाजा बद करके बैठ गयी!

जब पाच मिनट तक कोई जवाब न मिला तो 'सेटिंग डिपार्टमेंट' के दो मिस्त्रियो ने दरवाजे पर छेनी लगा कर जोर से धक्का दिया—पतली लकडी के पट खुल गये.

अंदर नाजनीन बेहोश पडी थी. हाथ सोफे पर से फर्श पर आ रहा था और हाथ के करीब टिचर आयोडीन की शीशी खाली पडी थी.

कुदन के कान में एक दर्द-भरी, दर्द-आशना आवाज आयी, "शुक्रिया आपका एहसान कभी न भूलूगी."

□

रिश्तों की एक-एक परत को धीरे-धीरे बड़े महज अंदाज मे पूरी ईमानदारी से कलात्मक तौर पर इस तरह खोलते चले जाते है कि एक ओर मासूमा और कुन्दन की त्रासदी हमें उदास कर देती है तो दूसरी ओर सेठों और दलालो के चेहरों का नकाब उलट जाता है। इस्मत चुग़ताई की मुहावरेदार बेबाक चटीली भाषा और अब्बास की स्वाभाविक, सहानुभूतिपूर्ण शैली पाठक के मन को कही दूर बहुत गहरे तक छू जाती है। 'समझौता' मे यदि यौन की विकृति और वितृप्ति है तो 'अंधेरा-उजाला' मे प्यार की अतृप्त प्यास। दोनों उपन्यास उर्दू के सुप्रसिद्ध शायर फैज अहमद फैज की इस पंक्ति के जीवन्त उदाहरण है—"दिल की बेसूद तड़प जिस्म की मायूस पुकार"—और जिनके पीछे है वासनाओं और आर्थिक विषमताओं का वीभत्स संसार। ये उपन्यास महज कला की दृष्टि से ही उत्कृष्ट कृतियां नहीं बल्कि सामाजिक दृष्टि से भी इस तथ्य के प्रमाणिक दस्तावेज हैं कि फिल्म जगत की रंगीनियां अपने अन्दर कितनी स्याहियों का असीम संसार मिमेटे हुए है। जहाँ मन और शरीर की हर पुकार दबी हुई चीत्कार में बदल जाती है।